रावण

पात्र

राम
विभीषण
जाम्ववान
लक्ष्मण
सुखैन
रावण

[स्थान : महासागर तट, रात्रि का प्रथम प्रहर। राम अकेले चिन्ता-मग्न श्वेत शिलाखण्ड पर बैठे हैं। पीछे अनन्त महासागर गरज रहा है। रह-रहकर 'रावण की जै-रावण की जै' का जयघोष सुनाई पड़ता है। बायीं ओर से जाम्बवान का प्रवेश।]

जाम्बवान : आर्यश्रेष्ठ ! (**राम की दृष्टि 'जाम्बवान पर टिक जाती है**) आपकी चिन्ता के भागी हम भी हैं।

राम : क्यों नहीं ! ···कहिए तात, लक्ष्मण का स्वास्थ्य अब कैसा है ?

जाम्बवान : बहुत सुधार है। महावीर हनुमान की लायी हुई औषधि से मस्तक-पीड़ा प्रायः समाप्त हो गई है। वैद्यराज सुखेन वास्तव में गुणी व्यक्ति हैं।

राम : भक्त सदैव गुणवान् होता है तात ! (**रुककर, समुद्र की ओर देखते हुए**) आज प्रातःकाल समुद्र पर पुल बाँधते समय, सहसा बन्धु विभीषण को किस प्रकार लक्ष्मण की अस्वस्थता का आभास हुआ था। पुल-निर्माण कार्य से उन्होंने तत्काल लक्ष्मण को समुद्र-तट से हटा लिया। वैद्यराज सुखेन उन्हीं की ही प्रेरणा से लंकापुरी से यहाँ आए हैं।

जाम्बवान : तभी से विभीषण सुखेन के साथ लक्ष्मण की सेवा में निरन्तर खड़े हैं।

[राम चुप समुद्र की ओर देखने लगते हैं। जाम्बवान अपलक राम को देख रहे हैं।]

जाम्बवान : आप कुछ उदास लग रहे हैं आर्य !

राम : उदासी मेरे धर्म में है तात !

जाम्बवान : हाँ, पर आज विशेष उदास लग रहे हैं।

राम : मेरे पुरुष का यही लक्षण है, 'तापस वेष विशेष उदासी···।'

[जाम्बवान निरुत्तर हो जाते हैं। राम पुनः महासागर की शून्यता में जैसे कुछ देखने लगते हैं।]

राम : आर्य जाम्बवान ! कल समुद्र पर पुल बाँधने का कार्य स्थगित रहेगा।

जाम्बवान : ऐसा क्यों आर्यश्रेष्ठ ?

[राम चुप हैं।]

जाम्बवान : हममें से किसी से कोई त्रुटि तो नहीं हुई !

राम : नहीं तात ! ऐसा कभी सम्भव नहीं।

[दायीं ओर से वैद्यराज सुखेन का प्रवेश।]

सुखेन : आर्यश्रेष्ठ की जै हो ! वीर लक्ष्मण अब पूर्ण स्वस्थ हैं।

राम : तुम्हारे हम कृतज्ञ हैं, वैद्यराज !

सुखेन : आप कृपासिन्धु हैं। मेरा अहोभाग्य कि इसी बहाने आपके पुण्य-दर्शन कर मेरा जीवन कृतार्थ हुआ।

राम : महावीर हनुमान अब प्रसन्न हैं न ?

सुखेन : पूर्ण प्रसन्न हैं।···पवनसुत आर्यश्रेष्ठ, मैं उनके श्रीचरणों से अन्तिम अनुलेपन उतारने जा रहा हूँ।

[सुखेन का प्रस्थान। कुछ ही क्षणों बाद सागर क्षेत्र से 'रावण की जय', 'रावण की जय'—यह जयघोष सुनाई पड़ने लगता है।]

राम : (उठकर) तात जाम्बवान ! सुन लीजिए यह जयघोष ! (रुककर) सुन रहे हैं न ?

जाम्बवान : सुन रहा हूँ आर्य !

राम : ध्यान से सुनते रहिए···।

जाम्बवान : क्षमा हो आर्य ! शत्रु का जयघोष मैं नहीं सुन सकता !

राम : सत्य को धैर्य से ग्रहण कर देखिए तात !

जाम्बवान : आर्य, यह भयानक जयघोष यदि कहीं महावीर हनुमान के कानों में पड़ा तो अनर्थ हो जाएगा !

[राम चुप हैं।]

जाम्बवान : वैरी का यह जयघोष पवनसुत को तत्काल विचलित कर देगा। जिस प्रकार बचपन में उन्होंने रवि को भक्ष लिया था।

राम : शान्त···शान्त हो, जाम्बवान ! रवि का भक्ष लेना, अबोध हनुमान का वह बचपन था। यह समूचा महाकाश शिवलोक है, जहाँ उनकी निर्मल महाशक्ति वास करती है।

जाम्बवान : आर्य ! फिर इस जयघोष की समाप्ति कहाँ है ?

राम : वही मेरी चिन्ता है तात ! (रुककर) और उस चिन्ता की आशा इसी जयघोष में है।

जाम्बवान : वह कैसे आर्य ?

राम : ध्यान से सुनो। इस जयघोष के अभ्यन्तर में उसकी अजेय शक्ति की अबाध भक्ति भी चल रही है। सुनो···सुनो तात !

[रावण के जयघोष के बीच शिवताण्डव का मन्त्र-गान उठता है जिसे राम और जाम्बवान सुनते हैं। जटाटवी···]

जाम्बवान : आश्चर्य है !

[राम चुप हैं।]

जाम्बवान : यह जयघोष जैसे समुद्र की लहरों से उठ रहा

[विभीषण का दायीं ओर से प्रवेश।]

विभीषण : आर्य, यह जयघोष कैसा ?

राम : सखा, तुम सबको यह मन्त्र-गान···यह जयघोष
—यह मुझे उसी क्षण से निरन्तर सुनाई दे रहा है,
तट पर आया हूँ।

जाम्बवान : रामसेन द्वारा समुद्र पर पुल बाँधे जाने
और यह आतंक जयघोष उसके आतंकित होने

विभीषण : यह सत्य है, आर्य !

राम : स्मरण रहे, रावण को शिव और ब्रह्मा की
पाकर समस्त लोकपाल, दिक्पाल उसके
शक्तियाँ उसकी आज्ञाओं के भीतर हैं।

विभीषण : किन्तु अधर्म से शक्ति नष्ट भी हो

राम : रावण के पास अपरा शक्ति है, लोक-
डरता ! (रुककर) जो सामर्थ्यवान्

जाम्बवान : क्षमा हो, आर्य ! इस प्रकार
अकारण चिन्तित हैं।

राम : चिन्ता कभी अकारण नहीं होती

जाम्बवान : और चिन्ता का कारण

राम : शक्ति नहीं, शक्ति का असी
उसके जयघोषकर्ता और

विभीषण : इन देवताओं पर

जाम्बवान : शक्ति पुत्र, धनु
सुग्रीव और अंगद
सेनानायक हैं—
रावण की अध

विभीषण : आप

राम : (
सुनो
में

जाम्बवान : यह जयघोष जैसे समुद्र की लहरों से उठ रहा है।

[विभीषण का दायीं ओर से प्रवेश।]

विभीषण : आर्य, यह जयघोष कैसा ?

राम : सखा, तुम सबको यह मन्त्र-गान···यह जयघोष, जो सहसा अभी सुनाई पड़ा है —यह मुझे उसी क्षण से निरन्तर सुनाई दे रहा है, जब से मैं इस महासागर के शून्य तट पर आया हूँ।

जाम्बवान : रामसेन द्वारा समुद्र पर पुल बाँधे जाने की सूचना रावण को मिल गई है। और यह आत्म जयघोष उसके आतंकित होने का प्रतीक है।

विभीषण : यह सत्य है, आर्य !

राम : स्मरण रहे, रावण को शिव और ब्रह्मा की अभय शक्ति प्राप्त है। उनसे वर पाकर समस्त लोकपाल, दिक्पाल उसके अधीन हैं। पवन और वरुण देव-जैसी शक्तियाँ उसकी आज्ञाओं के भीतर हैं।

विभीषण : किन्तु अधर्म से शक्ति नष्ट भी हो जाती है, आर्य !

राम : रावण के पास अपरा शक्ति है, लोक-व्यवहार में वह धर्म-अधर्म से तभी नहीं डरता ! (रुककर) जो सामर्थ्यवान् है, वह कभी दोषी नहीं कहलाता।

जाम्बवान : क्षमा हो, आर्य ! इस प्रकार आप रावण की शक्ति के प्रभाव में आकर अकारण चिन्तित हैं।

राम : चिन्ता कभी अकारण नहीं होती तात !

जाम्बवान : और चिन्ता का कारण रावण की शक्ति है ?

राम : शक्ति नहीं, शक्ति का अलौकिक साधन। (रुककर) सुनो, वरुणदेव और दिक्पाल उसके जयघोषकर्ता और शब्दवाहक हैं।

विभीषण : इन देवताओं पर यह प्रभाव रावण की दमन-नीति के कारण है।

जाम्बवान : शक्ति पुत्र, धनुषधारी, व्रतधारी लक्ष्मण-जैसे आपके अनुज, ऋक्षपतिवानरेन्द्र सुग्रीव और अंगद जैसे जिसके अजेय योधा हैं, महावीर हनुमान जैसे जिसके दक्ष सेनानायक हैं—रघुकुल गौरव आप अपनी असीम शक्ति को भूलकर अकारण ही रावण की अधम शक्ति को चिन्तना कर रहे हैं।···हुँ ! रावण की अपरा शक्ति !

विभीषण : आपके सम्मुख रावण की वह अपरा शक्ति क्या है ?

राम : (मन्दस्मित) रावण की वह अपरा शक्ति ! उसकी परिभाषा जानना चाहते हो ? सुनो उसका मन्त्रगान, जिसकी प्रतिध्वनि इस महासागर से लेकर सारे वायुमण्डल में व्याप्त है—इस महाकाश में, जो शिवमय है।

[पुनः शिवताण्डव का मन्त्रगान उभरकर छा जाता है। करालभालपट्टिका··· 'शक्तिभक्त, शंकरभक्त रावण की जय'—मन्त्रगान के अन्त में।]

विभीषण : (सहसा) पर महादेव शंकर की यह शक्ति निश्चय ही अन्याय-पक्ष की ओर है।

राम : शक्ति अन्याय को नहीं देखती लंकापति ! भगवान् शंकर की महाशक्ति पहले

अपने भक्त को देखती है।

विभीषण : कुछ भी हो पुरुषसिंह ! जिसने जगत्माता सीता का अपहरण किया है, उसका विनाश निश्चित है।

राम : विभीषण, यह भावुकता हमारा साथ न देगी ! विचार कर देखो, लंका में हमारा युद्ध नर और राक्षस के बीच नहीं होगा, बल्कि नर और महाशक्ति के बीच होगा।

[राम शिलाखण्ड पर बैठकर पुनः शून्य में कुछ देखने लगे हैं। विभीषण की दृष्टि राम के मुख पर अटल है। जाम्बवान महासागर की ओर अपलक देख रहे हैं—जहाँ से रावण के शिवताण्डव का मन्त्रगान प्रतिध्वनित हो रहा है। जटाकटाह-संभ्रम···]

जाम्बवान : नरश्रेष्ठ ! असत् आराधना का उत्तर सत् आराधना से दिया जाता है। यदि राक्षस को उस महाशक्ति का वर मिल सकता है, तो आर्यश्रेष्ठ आप···

विभीषण : महादेव शंकर आशुतोष हैं। उनके प्रति आपकी आराधना···।

राम : (**उठकर दोनों की ओर बाँहें फैलाते हुए**) धन्य हो आर्य जाम्बवान, सखा विभीषण ! मैं इसी मौलिक आराधना की चिन्ता में था। (**रुककर, सागर की ओर देखते हुए**) मैं इस महासागर तट पर शंकर की स्थापना कर दैवशक्ति की वह अपूर्व कल्पना करना चाहता हूँ, जो आर्यशक्ति का अनन्य आलोक देगा—जिसकी ज्योतिर्मय, तेज अग्नि में सारे राक्षस शलभ की तरह जलेंगे।

विभीषण : (**विनत**) धन्य हैं आर्यश्रेष्ठ !

जाम्बवान : (**प्रफुल्ल**) जानकी प्राण ! आशुतोष शंकर-स्थापना का वह विधान क्या होगा ?

राम : कल प्रातःकाल यहाँ रामेश्वर शंकर की स्थापना होगी।

[पृष्ठभूमि में देवतागण हर्ष से दुन्दुभी-वाद्य-यन्त्र बजाते हुए गाने लगते हैं···]

जाम्बवान : (**जाते हुए**) हम अपनी समस्त सेना को यह शुभ सूचना दें।

विभीषण : (**दूसरी ओर जाते हुए**) महावीर हनुमान् और व्रती लक्ष्मण को अपूर्व सन्देश दूँ !

[दोनों का प्रस्थान। राम पुनः उसी शिलाखण्ड पर बैठ जाते हैं और महासागर के उस पार अपलक देखने लगते हैं। दायीं ओर से सुखेन का प्रवेश।]

सुखेन : (**आनन्द-विभोर**) सीतापति-जानकीनाथ की जय ! (**रुककर**) आप इस तरह उदास महासागर में क्या देख रहे हैं ?

राम : प्रिय सुखेन ! मैं इस महासागर के पार लंकापुरी की अशोक-वाटिका में उदास बैठी हुई राजरानी सीता को देख रहा हूँ !

सुखेन : (**हाथ जोड़े हुए**) मैं अब कल प्रातःकाल यहाँ तक रुककर आर्य-द्वारा महादेव शंकर-स्थापना यज्ञ को देखकर लंकापुरी लौटूँगा !

राम : महादेव शंकर-स्थापना यज्ञ ! किन्तु···।

सुखेन : किन्तु क्या महाराज ?

राम : क्या बताऊँ प्रिय सुखेन !

[राम सागर की ओर देखने लगते हैं।]

सुखेन : आर्य, यदि मैं उसके जानने के अयोग्य हूँ तो फिर मैं अपनी विनम्र जिज्ञासा को···।

राम : नहीं, नहीं सुखेन ! तुम सर्वज्ञान के योग्य हो ! बात यह है सुखेन···।

सुखेन : हाँ-हाँ, कहिए आर्यश्रेष्ठ !

राम : आर्यों का यह वैदिक नियम है कि किसी भी यज्ञ में होता के साथ उसकी पत्नी का होना आवश्यक है।

सुखेन : तो यह पूर्ण होगा आर्य ! इस धर्म-कार्य के लिए माँ जानकी यहाँ अवश्य आएँगी !

राम : वैद्यराज !···क्या कह रहे हो तुम ?

सुखेन : आर्यश्रेष्ठ ! मैं राक्षस रावण का समर्थक नहीं हूँ। पर मैं यह कामना करता हूँ नाथ, कि कल प्रातःकाल समस्त आर्य विधि-विधानों के साथ महादेव शंकर-स्थापना यज्ञ की पूर्णाहुति हो जाए।

राम : सुखेन, तुम धन्य हो, किन्तु मैं किसी प्रकार भी इस धर्म-कार्य में रावण की कोई कृपा और उदारता नहीं चाहता।

सुखेन : पर आर्य, इस सेवा को रावण अपना सौभाग्य मानेगा !'

राम : किन्तु रावण का यह सौभाग्य मेरी जानकी का अपमान होगा। (**रुककर**) रावण की यह कृपा राम के लिए दया सिद्ध होगी।

सुखेन : (**हाथ जोड़े हुए**) मर्यादा पुरुषोत्तम! फिर शंकर-स्थापना का कार्य कैसे पूर्ण होगा ?

राम : उदास मत हो सुखेन ! हमारे आर्य धर्म में आपद् धर्म का विधान है। जानकी के स्थान पर उनकी प्रतिमा से ही सब कार्य पूर्ण होगा !

[यह कहते-कहते राम का प्रस्थान। सुखेन मन्त्रमुग्ध-सा राम को खड़ा देखता ही रह जाता है।]

सुखेन : कृपासिन्धु ! मैं सर्वथा क्षम्य हूँ ! मैं निर्बुद्धि···अज्ञानी !

[सुखेन की आँखें मुँदी हैं : श्रद्धा में विनत है। विभीषण का प्रवेश।]

विभीषण : (**स्नेह से उठते हुए**) उठो वैद्यराज सुखेन ! तुम अपने निर्मल-शिशुवत् प्रस्ताव में अकलुष हो ! प्रातःकाल राम का यह शंकर-यज्ञ पूर्ण होगा !

सुखेन : धन्य है।

विभीषण : महादेव शंकर को उस स्थापना से राम-दल में वह महाज्योति उठेगी, जिससे लंकायुद्ध में समस्त राक्षसों का नाश होगा !

[**जाम्बवान का प्रवेश।**]

जाम्बवान : राम की जय ! शंकर-महानुष्ठान प्रबन्ध का श्रीगणेश हो गया। यज्ञ के लिए रक्त इन्दीवर लाने महावीर हनुमान देवीदह के पथ में चले गए। अंगद और सुग्रीव यज्ञ में ऋषि-मुनियों को निमन्त्रित करने गए। नल और नील यज्ञ की सामग्री तैयार कर रहे हैं।

सुखेन : (गद्गद) इस महायज्ञ को देखकर मेरा जीवन कृतार्थ हो जाएगा !

विभीषण : युग-युगों के लिए वह ऐसा पुण्यक्षेत्र होगा, जिससे समस्त दक्षिण-पथ पावन हो जाएगा !

जाम्बवान : उसकी पुण्य छवि महासागर पर इसी क्षण से तिरने लगी है। लहरों में कितना प्रकाश उभर रहा है, जैसे आर्यशक्ति का अरुणोदय हो रहा हो !

[तीनों एक दृष्टि से सागर की ओर देखते हैं : 'रावण की जय', 'रावण की जय' की प्रतिध्वनि से सहसा सारा मंच पुनः गूंज जाता है। तीनों साश्चर्य एक-दूसरे को देख रहे हैं। जयघोष के बीच पुनः अन्तरिक्ष से शिवताण्डव का वही मन्त्र-गान—'जटाकटाहसंभ्रम···।' उभरता है। सहसा दायीं ओर से धनुष-बाण लिए लक्ष्मण का प्रवेश।]

लक्ष्मण : रावण जयघोष निःशब्द हो जा। (**सागर की ओर बढ़कर**) विषाक्त जयघोष का वाहक अन्तरिक्ष सावधान ! वरुणदेव ! तुम्हारे तट पर श्रीराम द्वारा देवाधिदेव शंकर की स्थापना होने को है। दसकन्ध रावण के राक्षस-शासन से तुम अब मुक्त हो।

[तीनों को देखते हुए।]

लक्ष्मण : आर्य जाम्बवान ! प्रिय सखा विभीषण ! अब यह विषाक्त जयघोष इस आकाश में कभी नहीं फैलेगा। सुनो अन्तरिक्ष के देवता ! समस्त दिक्काल-लोकपाल ! आज से निर्भय हो जाओ ! तुम सबमें आत्म-शक्ति जग रही है। तुम सब अब रावण-त्रास, राक्षस-भय से मुक्त होंगे !

जाम्बवान : (**सहसा**) लक्ष्मण ! वह देखो कौन आ रहा है ? वह किसका विमान अमा की ओर रात्रि में अन्तरिक्ष को वेधता हुआ चला आ रहा है !

लक्ष्मण : लंकापुरी की ओर से आ रहा हूँ तात !

विभीषण : वह रावण का विमान है आर्य !

लक्ष्मण : विभीषण !

विभीषण : हाँ आर्य ! सच है !

जाम्बवान : और वह विमान इधर ही आ रहा है।

[लक्ष्मण ध्यान से विमान की गति देख रहे हैं।]

विभीषण : सम्भवतः वह श्रीराम के पास क्षमा माँगने आ रहा हो ! अथवा शरणागत होकर आ रहा हो !

सुखेन : दोनों सम्भव है ! निश्चय ही जगत्माता जानकी की शिक्षा से उसमें सद्बुद्धि

जगी होगी (आत्म-विभोर हो

[सुखेन को जाते देखकर, लक्ष्म

लक्ष्मण : प्रिय सुखेन ! आर्य विभा

[सुखेन का शान्ति से प्रस्थान।

लक्ष्मण : (सागर की ओर सजग
यहाँ आना उचित नहीं है।
अनुष्ठान पूर्ण करना है !

विभीषण : रावण-विमान इधर

जाम्बवान : सौमित्र ! चुप
रावण हमारे नूतन यज्ञ से

विभीषण : कोई आश्चर्य नहीं

लक्ष्मण : यह भी सम्भव है
हनुमान्, अंगद, सुग्रीव
स्थिति में खल रावण

जाम्बवान : अनार्य शत्रु

लक्ष्मण : (धनुष-बाण उ
विश्वासघाती रावण

जाम्बवान : (एक ओर

विभीषण : (दूसरी ओ

[तेज शंखध्वनि
लक्ष्मण धनुष पर
रहे हैं। सहसा

जाम्बवान : आर्य !

[दौड़ते हुए

विभीषण : दस

सुखेन : (प्रस
है !

जाम्बवान : प

लक्ष्मण : (
यदि
शीघ्र

[रा

राम :

जगी होगी (**आत्म-विभोर हो**) राम की जय ! कृपासिन्धु को सूचना दूँ !

[**सुखेन को जाते देखकर, लक्ष्मण रोकते हैं ।**]

लक्ष्मण : प्रिय सुखेन ! आर्य विश्राम कर रहे हैं, निष्प्रयोजन उन्हें कष्ट देना···।

[**सुखेन का शान्ति से प्रस्थान ।**]

लक्ष्मण : (**सागर की ओर सजग प्रहरी की भाँति देखते हुए**) रावण का इस समय यहाँ आना उचित नहीं है। आर्य विश्राम कर रहे हैं, और कल प्रातःकाल हमें यज्ञ-अनुष्ठान पूर्ण करना है !

विभीषण : रावण-विमान इधर ही आ रहा है !

जाम्बवान : सौमित्र ! चुप क्या देख रहे हो ? राक्षस शत्रु का क्या भरोसा ! सम्भव है रावण हमारे नूतन यज्ञ से डरकर उसे विध्वंस करने की इच्छा से यहाँ आ रहा हो !

विभीषण : कोई आश्चर्य नहीं !

लक्ष्मण : यह भी सम्भव है कि दसकन्ध को यह सूचना मिल गयी हो कि महावीर हनुमान्, अंगद, सुग्रीव आदि यज्ञ-अनुष्ठान कार्य से बाहर चले गये हैं, अतएव इस स्थिति में खल रावण हम पर आक्रमण करने आ रहा हो ।

जाम्बवान : अनार्य शत्रु का कोई भरोसा नहीं !

लक्ष्मण : (**धनुष-बाण उठाकर**) तात ! इस सागर-तट पर मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि इस विश्वासघाती रावण के लिए मैं अकेला ही पर्याप्त हूँ !

जाम्बवान : (**एक ओर निकलते हुए**) राम-सेना सावधान !

विभीषण : (**दूसरी ओर जाते हुए**) वीर वानर, भल्लूकयोद्धा सावधान !

[**तेज शंखध्वनि की एक गहन रेखा, युद्ध-सूचना के निमित्त सर्वत्र खिंच जाती है। लक्ष्मण धनुष पर बाण चढ़ाए हुए सजग प्रहरी की भाँति उसी दिशा में अटल देख रहे हैं। सहसा जाम्बवान का प्रवेश ।**]

जाम्बवान : आर्य ! घोर आश्चर्य है, रावण के संग जैसे मातु जानकी भी हैं !

[**दौड़ते हुए विभीषण का प्रवेश ।**]

विभीषण : दसकन्ध रावण की गति विचित्र है आर्य !

सुखेन : (**प्रसन्न वदन आता है**) रावण, मातु जानकी के साथ राम की शरण आ रहा है !

जाम्बवान : पर मेरा विश्वास यह कदापि नहीं है ! रावण-जैसा शत्रु और···

लक्ष्मण : (**बीच ही में**) राम-जैसा खल-संहारक ! (**उद्दीप्त स्वर में**) सावधान रावण ! यदि तूने माँ जानकी का तनिक भी अपमान किया, तो दसकन्ध याद रखना तेरे दस शीश और मेरा यह एक बाण !

[**राम का प्रवेश ।**]

राम : आश्वस्त हो वीर लक्ष्मण !

लक्ष्मण : (**चरणों में विनत हो**) आप विश्राम कीजिए आर्य !

राम : तपस्वी विश्राम नहीं करता लक्ष्मण !

लक्ष्मण : माँ जानकी को अपने संग लिए हुए रावण आ रहा है, यह कैसा है आर्यश्रेष्ठ !

राम : यह आश्चर्य नहीं, असम्भव है ! ऐसा कभी नहीं हो सकता । जानकी स्वतः शक्ति हैं, उन पर रावण का इस तरह कोई बल नहीं चल सकता !

[सहसा अकेले रावण का प्रवेश ।]

लक्ष्मण : रावण ! दसकन्ध रावण तुम !

रावण : हाँ, मैं ! भूल गए क्या ?

राम : आओ, तुम्हारा स्वागत है श्री दसकन्ध ! इस समय यहाँ आने का कैसे कष्ट किया ?

रावण : आपकी सहायता के लिए आर्य ! रावण वीर योद्धा ही नहीं भक्त भी है !

राम : क्यों नहीं !

लक्ष्मण : किन्तु भक्त का प्रयोजन क्या है ?

रावण : सदाचार सीखो लक्ष्मण !···मैं लंकापति रावण तुम्हारे आर्यश्रेष्ठ राम से बातें कर रहा हूँ ! (**सबको देखता हुआ**) मैं आपके प्रति अपनी सद्भावना एक उज्ज्वल प्रतीक लाया हूँ !

राम : धन्यवाद !

रावण : वरुण देवता ने मुझे बताया कि आप अन्ततः मेरे ही आराध्यदेव शंकर की शरण में जा रहे हैं। ठीक है आप मेरी ही महाशक्ति की प्रसन्नता से मुझे पराजित करने की योजना बना रहे हैं। मैं आपकी विवशता को अनुभव कर रहा हूँ।

लक्ष्मण : मर्यादा में रहकर बोलो रावण !

रावण : मेरी मर्यादा का अनुभव करो लक्ष्मण ! राम मेरे आराध्यदेव शंकर की यहाँ स्थापना करके, उनसे वर-प्राप्ति की इच्छा करते हैं। वह वर स्वभावतः मेरे प्रतिकूल होगा, किन्तु यह पूजा मेरे आराध्यदेव की है—इसलिए मैं उसकी सफलता चाहता हूँ ।

लक्ष्मण : धन्यवाद रावण !

रावण : आर्य राम ! मेरे सर्वशक्तिमान कालकूट शंकर की पूजा में कोई त्रुटि न हो—इसकी मैं मंगलकामना लेकर आया हूँ। आपको यदि मन्त्र चाहिए, मैं अपने प्रणीत शिवताण्डव के मन्त्र दे सकता हूँ···मैं···।

राम : तुम्हारी यह मंगलकामना निश्चय ही फलदायक होगी।

रावण : पवन देवता ने मुझे अभी जाकर बताया कि ऐसे अनुष्ठान यज्ञ में, आर्य-विधि के अनुकूल होता के संग उसकी धर्मपत्नी का रहना परम आवश्यक है, नहीं तो पूर्णाहुति नहीं हो पाती !

राम : (**बीच ही में**) पवन देवता ने सत्य कहा है, किन्तु हमारे धर्म-विधान में आपद् धर्म का भी नियम है।

हो) आप विश्राम कीजिए आर्य !
करता लक्ष्मण !
ले संग लिए हुए रावण आ रहा है, यह कैसा है आर्यश्रेष्ठ !
सम्भव है ! ऐसा कभी नहीं हो सकता । जानकी स्वतः
का इस तरह कोई बल नहीं चल सकता !

प्रवेश।]

म तुम !
?
श्री दसकन्ध ! इस समय यहाँ आने का कैसे कष्ट

आर्य ! रावण वीर योद्धा ही नहीं भक्त भी है !

है ?
मैं लंकापति रावण तुम्हारे आर्यश्रेष्ठ राम से बातें
) मैं आपके प्रति अपनी सद्भावना एक उज्ज्वल

म अन्ततः मेरे ही आराध्यदेव शंकर की शरण
शक्ति की प्रसन्नता से मुझे पराजित करने
ता को अनुभव कर रहा हूँ।

! राम मेरे आराध्यदेव शंकर की यहाँ
ना करते हैं। वह वर स्वभावतः मेरे
की है—इसलिए मैं उसकी सफलता

र की पूजा में कोई त्रुटि न हो—
दि मन्त्र चाहिए, मैं अपने प्रणीत

ी।

नुष्ठान यज्ञ में, आर्य-विधि
म आवश्यक है, नहीं तो

धर्म-विधान में आपद्

रावण : धर्म का आपद्धर्म क्यों ? मैं आपके इस धर्म-कार्य की पूर्ण सफलता के लिए आपकी जानकी को संग ले आया हूँ।

लक्ष्मण : (**सक्रोध**) क्या ?···रावण, तुझे पता है तू इस समय कहाँ खड़ा है ?

[रावण हँसता है । उसी समय जानकी का प्रवेश । उन्हें देखते ही राम के अतिरिक्त वहाँ के सभी लोग उन्हें नतशिर प्रमाण करते हैं, और उन्हें साश्चर्य देखते रह जाते हैं । राम वहाँ से बाहर चले जाते हैं ।]

लक्ष्मण : माँ जानकी ! आपमें इतना परिवर्तन ! (**रुककर**) आपने आर्य राम को प्रणाम तक नहीं किया ! आपको देखते ही राम यहाँ से उठ क्यों गए ? आप उत्तर दीजिए ! (**रुककर**) आप इस तरह चुप क्यों हैं ? आपने मुझे आशीष तक नहीं दिया (**रावण से आवेश में**) दसकन्ध रावण, तूने माँ जानकी को यहाँ लाकर उनका—हम सबका घोर अपमान किया है !

रावण : जानकी चुप है इसलिए ! तुम्हारी जानकी धर्मशीला हैं। यह मेरे कहते ही स्वयं अपनी इच्छा से यहाँ आयी हैं। वहाँ से चलते समय इन्होंने अपने-आपसे कहा, 'इस समय मैं राम की मर्यादा बनकर यहाँ धर्म-कार्य से चल रही हूँ, अतएव मैं जगत् व्यवहार और वाणी से निष्क्रिय रहूँगी।'

जाम्बवान : क्यों माँ जानकी, क्या यह सही है ?

लक्ष्मण : माँ जानकी और इस जानकी में अन्तर है !

रावण : स्थिति अन्तर से सब में अन्तर हो जाना स्वाभाविक है ! एक जानकी जनकपुर की, दूसरी दण्डक वन की, तीसरी अशोक वाटिका की, और चौथी जानकी यह ! जिसे राम द्वारा मुक्ति नहीं मिली, किन्तु राम की धर्म-मर्यादा के लिए जिसे यहाँ आना पड़ा।

लक्ष्मण : यह सत्य नहीं, तुम्हारी व्याख्या है राक्षसपति ! (**रुककर**) तुम्हीं सच-सच बोलो रावण ! वह कौन है ? तुझे माँ जानकी का अपमान करने का कोई अधिकार नहीं है।

रावण : ठीक है, मैं जानकी को यहाँ से वापस ले जा रहा हूँ। (**पुकारता हुआ**) विमान-चालक (**घूमकर**) मैं यही देखने आया था कि राम-लक्ष्मण को उनकी जानकी अब स्वीकार्य नहीं है।

[रावण जाने लगता है।]

लक्ष्मण : खलपति रावण, सावधान !

[रावण का प्रस्थान।]

लक्ष्मण : बोलो कौन हो तुम ? माँ जानकी का अपमान करने वाली, मैं तेरे इस अपावन रूप को देखना नहीं चाहता ! दूर हो जा यहाँ से !

[राम का प्रवेश।]

राम : धैर्य रखो लक्ष्मण ! अपने विवेक पर भरोसा रखो !

लक्ष्मण : आर्य, मैं इस जानकी को नहीं देखना चाहता ! हे ईश्वर, मेरी आँखें···।

राम : शान्त···शान्त लक्ष्मण ! (**लक्ष्मण को सँभाले हुए**) लक्ष्मण ! प्रातःकाल होने में अब विलम्ब नहीं है ! सत्य देखने के लिए पुरुष को अनेक असत्य देखने पड़ते हैं। इसे बुद्धि से ग्रहण करो लक्ष्मण !

लक्ष्मण : बुद्धि से देखूं ? जिस जानकी श्रद्धा से देखता आ रहा था उसे···। ठीक है, मैं मातु जानकी के चरणों को पहचानता हूँ। उसमें मुझे कोई शक्ति धोखा नहीं दे सकती ! (**जानकी की ओर बढ़कर**) रुको, मैं तुम्हारे चरण पहचानूंगा !

[लक्ष्मण जैसे-जैसे आगे बढ़ते हैं, मूर्तिवत् जानकी पीछे हटने लगती है।]

लक्ष्मण : रुको, भागती कहाँ हो ?

[जानकी के पीछे लक्ष्मण का दौड़ना! कुछ ही क्षणों बाद लक्ष्मण हतप्रभ लौटते हैं।]

लक्ष्मण : (**राम के चरणों में**) आर्य, मुझसे अपराध हुआ क्या ? मातु जानकी मेरे सामने ही अन्तर्धान हो गयीं !

[सब हतप्रभ राम का मुख देख रहे हैं। राम के होंठों पर मुसकान है।]

राम : वह जानकी नहीं थीं लक्ष्मण! वह कृत्रिम जानकी, रावण की माया रचना थी !

लक्ष्मण : आर्य !

राम : प्रसन्न हो लक्ष्मण ! रावण की वह छल रचना तुम्हारे संस्पर्श को नहीं सह सकती थी ! इसलिए तुम्हारे छूते ही वह मायाविनी रचना तत्काल नष्ट हो गयी !

[राम लक्ष्मण के साथ बढ़ते हैं।]

राम : चलो, अब महाशक्तिदेव शंकर का यज्ञ प्रारम्भ हो !

जाम्बवान : जय रामेश्वरम् !

[लक्ष्मण, विभीषण, सुखेन आदि एक स्वर में 'जय रामेश्वरम्' कहते हैं। पृष्ठभूमि में पूजा-संगीत उभरता है।]

जाम्बवान : जय रामेश्वरम् !

[सभी यह जयघोष करते हुए चले जाते हैं। अकेला सुखेन आत्मविभोर वहीं खड़ा रह जाता है : पूजा-भाव में करबद्ध। पृष्ठभूमि में राम का शंकर स्तुतिगान छा जाता है।]

शङ्खेन्द्वाभमतीव सुन्दरतनु शार्दूलचर्माम्बरं
कालव्यालकरालभूषणधरं गङ्गाशशाङ्कप्रियम्।
काशीशं कलिकल्मषौघशमनं कल्याणकल्पद्रुमं
नौमीड्यं गिरिजापतिं गुणनिधिं कन्दर्पहं शङ्करम्॥

[परदा]

भरोसा रखो !

ा चाहता ! हे ईश्वर, मेरी आँखें…।

ो सँभाले हुए) लक्ष्मण ! प्रातःकाल होने में
लिए पुरुष को अनेक असत्य देखने पड़ते हैं।

से देखता आ रहा था उसे…। ठीक है, मैं
हूँ। उसमें मुझे कोई शक्ति धोखा नहीं दे
ी, मैं तुम्हारे चरण पहचानूंगा !

ानकी पीछे हटने लगती है।]

क्षणों बाद लक्ष्मण हतप्रभ लौटते हैं।]

हुआ क्या ? मातु जानकी मेरे

होंठों पर मुसकान है।]

ी, रावण की माया रचना थी !

तुम्हारे संस्पर्श को नहीं सह
छाया तत्काल नष्ट हो गयी !

ारम्' कहते हैं। पृष्ठभूमि

ाविभोर वहीं खड़ा
ुविमान छा जाता

हँसी की बात

पात्र

मास्टर साहब
रामप्रसाद गजट
शिवशंकर
ब्रदर, सिस्टर
महाशयजी
सुमन
कम्पनी के एजेण्ट

[सामने बन्द दरवाजा। दायीं ओर बाहर जाने का दूसरा दरवाजा। बायीं ओर एक खाट पर महाशयजी शान्त मौन पड़े हैं। खुले कमरे में दो एक कुरसियाँ हैं, मेज पर एक घड़ी रखी है। कुछ कागज कलम आदि हैं। सहसा दायीं ओर से पुकारते हुए रामप्रसादजी आते हैं।]

रामप्रसाद : मास्टरजी ! मास्टरजी ! (**सामने का बन्द दरवाजा पीटते हुए**) खोलिए ···जल्दी कीजिए !

[भीतर से आवाज।]

मास्टर : कौन सज्जन हैं ?

रामप्रसाद : आपका दीन सेवक रामप्रसाद गजट ! बहुत तेज दौड़ा आया हूँ। साँस फूल रही है मास्टरजी ! जल्दी दरवाजा खोलिए ! हाय राम ! हाय राम !

मास्टर : (**दरवाजा खोलकर**) ओह हो ! पधारिए···पधारिए ! (**सहसा**) नहीं-नहीं, रुकिए ! मैं जरा कपड़े पहन लूँ ! शास्त्र कहता है कि···(**भीतर जाते हैं।**)

रामप्रसाद : जल्दी कीजिए मास्टरजी ! बड़ी भयानक खबर है। आज जो नहीं हँसेगा, वह सीधे मौत के मुँह में जाएगा। अजी, ग्रहों का आज ऐसा संयोग आ पड़ा है ! (**खाट की ओर देख**) कौन हैं जी आप ? हाय कोई मर गया है !

[महाशयजी की नाक बजती है।]

रामप्रसाद : (**सभय**) हाय रे !

[भीतर से मास्टर साहब आते हैं।]

मास्टर : क्या बात है गजट बाबू ? लगता है आप आज बड़े कष्ट में हैं।

रामप्रसाद : पहले जरा-सा हँस दीजिए मास्टरजी ! हँस दीजिए झट से ! हँसिए···!

मास्टर : क्या बात है ? कैसी हँसी !

रामप्रसाद : ओहो, आप तो देर कर रहे हैं ! बस पहले हँस दीजिए···मेरी कसम, पहले हँस दीजिए फिर बात बताता हूँ।

मास्टर : अच्छा भाई लो ! जैसी तुम्हारी आज्ञा। (**हँसने का प्रयास करते हैं।**)

रामप्रसाद : थोड़ा-सा और ? थोड़ा···सा। ताकि पूरा मुँह तो खुल जाए ! आज मुसकाने से ही काम नहीं चलेगा ! चलिए हँसिए इस तरह···।

[दोनों व्यक्तियों की हँसी।]

रामप्रसाद : (**चैन से साँस लेकर**) ओहो हो-हो !

मास्टर : रामप्रसाद !

रामप्रसाद : कुछ न पूछिए···कुछ न कहिए मास्टरजी, आज जो नहीं हँसेगा, उस पर मौत की छाया पड़ जाएगी···ऐसा आज ग्रह-नक्षत्रों का योग ही है ! खबर पाते ही मैं सीधे आपके पास दौड़ा कि अपने मास्टर साहब को बचा लूँ क्योंकि आप तो ऐसे हैं जो हफ्ते में कहीं एकाध बार महज तीन सेकेण्ड के लिए हँसते हैं ।

मास्टर : (प्रसन्न हो) ओहो-हो···यह बात !

[हँस पड़ते हैं ।]

रामप्रसाद : हाँ, हाँ, और हँसिए···हँसिए···हँसिए···नाना प्रकार से हँसिए···(हँसते हुए) ऐसे···ऐसे···। ओह हो ! बड़ा जीवन है आपमें मास्टर साहब···जुग-जुग जीयो जी !

मास्टर : अच्छा बैठिए भी तो !

रामप्रसाद : अब तो मुझे आज्ञा ही दीजिए मास्टर साहब, बात यह है न कि मुझे जाना है ! बहुत लोगों को यह खबर देनी है । वरना जो आज नहीं हँसे रहेगा, ठीक उस क्षण में उस पर फालिज गिरेगा—और वह बच नहीं सकता ।

मास्टर : अच्छा-अच्छा, आइए तो, देखिए यह धूप में महाशयजी लेटे हैं···नंगे बदन हैं । पूरे बदन में तेल-मालिश करा रहे हैं । प्राणायाम साधे हुए हैं ।

रामप्रसाद : ओहो महाशयजी ! नमस्कारम्···नमस्कारम् !

महाशय : कौन ? ओ हो ! जरा साँस भर लूँ । फिर बोलूँजी ! (रुककर) आइए जी रामप्रसाद गजट ! कहो बन्धु !

रामप्रसाद : अरे इतना तेल चुपड़ रखा है···च···च···च । हँस दो···जरा-सा हँस दो मुसकरा दो जरा-सा···।

मास्टर : हाँ-हाँ, हँस दो महाशयजी ।

रामप्रसाद : हाँ जरा-सा···और जरा-सा । थोड़ा-सा और···थोड़ा-सा और···बस··· बस ! कारण मत पूछो···वरना हँसने का कोई फल न होगा ! बड़ी उम्दा धूप है यहाँ !

मास्टर : तो आइए बैठिए । एक चारपाई आप ले लीजिए न । मैं तो पूरे जाड़े-भर नियम से बदन में तेल-मालिश कराके यहीं धूप में लेटा रहता हूँ । कल से महाशयजी ने भी मेरे नियम का पालन करना प्रारम्भ किया है !

रामप्रसाद : पर मुझसे यह न होगा मास्टर साहब···मुझे बड़ा घिन लगता है···मैं तो चला···आज्ञा दीजिए···एक बार और हँस दीजिए कृपा कर ! देखिए जैसे मैं हँसता हूँ···पूरी शक्ति से हँसिए !

[तीनों की विभिन्न प्रकार की हँसी, उसी क्षण भीतर से अभिनय करते हुए शिवशंकर, सुमन और प्रॉम्प्टर आते हैं ।]

शिवशंकर : (अभिनय का रिहर्सल) निम्मी ! मुझ पर भरोसा रखो···मेरी आँखों में

देखो। नीले सागर में जैसे···जैसे···प्रॉम्प्ट करो न यार ! क्या है इसके बाद ?··· जैसे···जैसे···यार बोलो ना प्रॉम्प्टर प्लीज।

प्रॉम्प्टर : जैसे···जैसे···इसके बाद कुछ नहीं है।

शिव : और उसके बाद ?

प्रॉम्प्टर : उसके बाद है, आँख दिखाकर···चलिए आँख दिखलाइए।

शिव : हाँ दिया·· उसके आगे···?

प्रॉम्प्टर : उसके बाद भी कुछ नहीं है ! नो···नो आई एम सॉरी···उसके बाद है, दर्द से साँस भरना ! (**स्वयं भरता है**) इस तरह !

शिव : यार तुम 'प्रॉम्प्ट' करो न ! ऐक्टिंग क्या करने लगे ? यही तो मुसीबत है।

सुमन : धीरे-धीरे बोलो···कहीं पिताजी न सुन लें।

शिव : अच्छा शुरू ! (**साँस लेकर**) निम्मी ! बोलो क्या कहती हो ?

सुमन : (**अभिनय में**) शिव ! शिव तुम इतने अधीर मत हो ? मैं अपने प्राणों की सौगन्ध लेकर कहती हूँ, तुम्हारे सिवा मेरे जीवन में···!

[मि० रामप्रसादजी डर जाते हैं।]

रामप्रसाद : आँय ! यह क्या है ? ये लोग भूत हैं क्या ? भूत···ग्रह नक्षत्र !

मास्टर : क्या है रामप्रसादजी ?

महाशय : अरे, इनकी तो ज़बान मुँह से बाहर निकल आई ! क्या हो गया इन्हें ?

रामप्रसाद : (**लड़खड़ाती जबान से**) वहाँ···वहाँ···वह देखिए···वह···

मास्टर : देखता हूँ मैं···धीरज रखिए आप ! (**बढ़कर**) कौन हो तुम लोग ? यह सब क्या है ?

[रिहर्सल हो रहा है।]

शिव : निम्मी ! तुम मेरी साँस हो ! मेरे मन की वीणा तुम्हारी पराग रची हुई उँगलियों के स्पर्श बिना कभी नहीं बजेगी !

सुमन : शीऽव् ! तुम मेरे जीवन के प्रभात हो ! बसन्त हो मेरी आशा के। मेरी कामना के तुम पावस फुहार हो !

मास्टर : बस···बस···बस! मेरी कामना के पावस फुहार ! दुश्चरित्र ! असंयमी !

[तीनों इधर-उधर भागते हैं।]

मास्टर : खबरदार ! अगर किसी ने भागने की कोशिश की ? मुझसे कोई नहीं बचकर निकल सकता। जिन्दगी-भर तुम जैसे लौंडों को चराया है ! बोलो क्या कर रहे थे तुम लोग यहाँ ?

शिव : पिताजी, हम लोग यहाँ एक एकांकी नाटक का रिहर्सल कर रहे थे !

मास्टर : हूँ, कौन लेखक है उसका ?

शिव : आपके आशीर्वाद से पिताजी, मैंने ही इसे लिखा है ! यह मेरी रचना आपको ही

समर्पित होगी !

मास्टर : चुप रहो । हूँ, तुम कौन हो ? (**प्रॉम्प्टर से क्रोध में**) तुम्हारा नाम ?

प्रॉम्प्टर : (**रोने लगता है**) प्रॉम्प्टर है मास्टर साहब ! इन लोगों ने मुझे जबरदस्ती पकड़ लिया है ! कान पकड़ता हूँ मैं, अब ऐसा काम मैं कभी नहीं करूँगा !

[बेतरह रोने लगता है ।]

मास्टर : अच्छा, अच्छा माफ, किया तुम्हें ! भाग जाओ !

प्रॉम्प्टर : (**घबराया हुआ**) नहीं···नहीं···।···अच्छा···अच्छा, हाँ-हाँ-हाँ···नमस्ते।

[भागता है ।]

मास्टर : क्यों शिवशंकर, सुमन तुम्हारी बहन है न !

शिव : जी···जी हाँ ! सुमन, तुम भी बोलो न !

सुमन : पिताजी, युनिवर्सिटी में हमारा यह ड्रामा होगा। मैं सेक्रेटरी हूँ । हमारे उस एसोसियेशन का नाम है—'छात्र चरित्र-निर्माण संघ'। उसका उद्घाटन करेंगी मिसेज तिरविल्लुउदम।

मास्टर : क्या ?

सुमन : तिरविल्लीउदम ! नहीं-नहीं, तिरविल्ल-विल्ली···।

शिव : तिरविल्ली नहीं पिताजी, तिरविल्लुउदम !

[महाशयजी रामप्रसाद के संग आते हैं ।]

महाशय : आइए···डरिए नहीं रामप्रसादजी, डरने की कोई ऐसी बात नहीं है ! सब अपने ही घर के बच्चे मालूम हो रहे हैं ।

रामप्रसाद : ओ हो हो हो ! राम राम राम ! यह सब क्या है बेटे ?

मास्टर : अरे ड्रामा है ड्रामा। यहाँ रिहर्सल हो रहा था ! भाई अपनी बहन से फरमा रहा था···छी···छी···छी···हद हो गया ! (**माथा पीटते हैं**)

महाशय : छोड़िए मास्टर साहब ! अपने ही बच्चे हैं । ड्रामा कर रहे थे, कोई सचमुच की बात थोड़े ही है !

रामप्रसाद : अच्छा, अच्छा, पहले सब बच्चों से कह दीजिए कि थोड़ा-थोड़ा सब मुसकरा दें ! चलो बच्चो, थोड़ा-थोड़ा मुसकरा दो···बहुत शुभ है आज !

मास्टर : रुकिए रामप्रसादजी पहले मैं इनको दण्ड दे दूं, फिर कुछ होगा ! मैं इन्हें आज क्षमा नहीं कर सकता, हाँ !

रामप्रसाद : नहीं-नहीं, हाथ जोड़ता हूँ मास्टर साहब ! पहले इनको मुसकरा लेने दीजिए न ! हाँ, हँसो बेटे ! सुमन बेटी हँसो ! डरो नहीं ! पिताजी कुछ नहीं कहेंगे···मुसकराओ···एक दो···तीन···शाबाश !···हाँ···!

[हँसता है ।]

तुम भी हँस दो शिवशंकर बेटे···! हँस दो ! डरो नहीं, पिताजी आप तो दयावान्

व्यक्ति हैं। कुछ दण्ड नहीं देंगे ! हाँ···हाँ···हँसो न !

महाशय : हाँ-हाँ, मास्टर साहब जब हेड मास्टर थे, तब खुद अपने स्कूल में नाटक कराया करते थे।

रामप्रसाद : अरे, यह खुद बड़े अच्छे ऐक्टर थे ! इसी बात पर हँस दो बेटे !

[हँसता है।]

रामप्रसाद : शाबाश !

सुमन : हाँ, पिताजी ?

शिव : बोलिए पिताजी ?

मास्टर : लेकिन तुम लोग-जैसा चरित्रहीन नाटक नहीं। कला का धर्म है, चरित्र-निर्माण !

रामप्रसाद : जैसे जाड़े की धूप में तेल-मालिश का धर्म है स्वास्थ्य-निर्माण।

[सब हँस पड़ते हैं।]

सुमन : पिताजी, सच आपने ड्रामा में पार्ट किया है ?

महाशय : अरे···सदा हीरो का पार्ट किया है ! वीर अभिमन्यु में रावण का पार्ट, महारथी कर्ण में सुदामा का पार्ट और···।

मास्टर : अरे रे रे ! महाशयजी आपको यह क्या हो गया है ? वीर अभिमन्यु में रावण का पार्ट ! दिमाग तो ठीक है आपका ?

रामप्रसाद : (हँसते हुए) एक तो धूप, दूसरे खुद कड़वा तेल··· महाशयजी के दिमाग में गरमी चढ़ गई है ! तुरन्त बर्फ मँगवाइए मास्टर साहब। नहीं तो इनके सिर पर फालिज गिरने का अन्देशा है !

महाशय : नहीं···नहीं ! मैं नहाने जा रहा हूँ···तुरन्त स्नान करूँगा !

मास्टर : हूँ··· अवश्य ! स्नान द्वारा पाप से मुक्ति मिलती है। भीम के पाप का शमन स्नान से ही हुआ था ! बोलो, महाभारत पढ़ा है तुम लोगों ने ?

शिव : पूरा नहीं पढ़ा है !

मास्टर : कितना पढ़ा है ?

शिव : कितना···कितना कुछ नहीं पढ़ा है पिताजी !

मास्टर : और नाटक करो ! और नाटक लिखो। 'मेरी कामना के तुम पावस फुहार हो।' ओ हो हो ! वाह रे तेरी उपमा ! बोलो···पावस माने !···बोलो ··सुमन ·· तुम बताओ ?

सुमन : पावस···पावस माने···गरमी का महीना !

मास्टर : हूँ ! यही है तुम्हारी आजकल की पढ़ाई। सुन लीजिए रामप्रसादजी !

रामप्रसाद : अजी बच्चे हैं, जाने भी दीजिए। पावस अमावस से उनका क्या मतलब ? 'एटम' और 'स्पुटनिक' के जमाने में कोई माने-जाने याद रखता है···जाने दीजिए !

मास्टर : सत्यानास हो गया ! शिवशंकर तुम बताओ !

शिव : पावस माने···'प्यासा' पिताजी !"

मास्टर : (व्यंग्य से) प्यासा पिताजी ! जाओ और फिल्म देखो···'प्यासा', 'नागिन' और क्या नाम है रामप्रसादजी !

रामप्रसाद : हाय, 'तुम-सा नहीं देखा', अजी, 'दिल देके देखो !'

मास्टर : शिव···शिव···शिव···क्या जमाना आ गया है रामप्रसादजी ! फिर इन नव-युवकों का चरित्र-निर्माण कहाँ से हो ? जो फिल्में देखते हैं, स्वभावतः वही अपने सामाजिक जीवन में घटित किया चाहते हैं । सत्य है ! कला वही श्रेष्ठ है, जिससे चरित्र-निर्माण हो !

[सहसा अभिनय के स्वर में—]

बनें साहब पहन कर कोट पतलूँ
मजा इसमें बड़ा है जिन्दगी का !
हैं कोरे अक्ल के बेदुम के टट्टू
हुए ऐसे नये फैशन पे लट्टू ।
समय यह खूब आया सभ्यता का,
खिला गुल हिन्द में आवारगी का !

रामप्रसाद : (ताली बजाते हुए) ताली···ताली···! ताली···।

[संग-संग दोनों तालियाँ बजाते हुए हँसते हैं ।]

मास्टर : (सहसा) शान्त । बड़े हँसने और ताली बजाने चले हैं ?

सुमन : आप ही के तो दोस्त ने कहा है !

मास्टर : तुम लोगों को लज्जित होना चाहिए !

शिव : मैं लज्जित हूँ पिताजी !

मास्टर : अच्छा सिर ऊपर उठाओ ! बोलो, तुम लोगों को क्या सजा दी जाए ?

शिव : सुमन, तुम बता दो न !

सुमन : नहीं, तुम्हीं कह दो !

शिव : पिताजी···पिताजी···हमारे ड्रामे में पार्ट करने के लिए एक लड़की की कमी पड़ गयी है !

मास्टर : तो ?

शिव : सुमन, आगे तुम कह दो ?

सुमन : तुम्हीं क्यों नहीं कह देते ?

शिव : पिताजी, हमें बीस रुपये दे दीजिए, फिर एक लड़की ड्रामा में पार्ट करने के लिए मिल जाएगी ।

मास्टर : क्या ? क्या कहा रे ! भागते कहाँ हो ?···सत्यानास हो गया । इनकी हिम्मत तो देखो ! कैसा जमाना आ गया है ! खबरदार, तुम लोग अगर घर से बाहर निकले ! तेल लगाकर स्नान करो, फिर भोजन करके आराम करो । जाड़े में दिन

को सोना स्वास्थ्यकर है ! अश्लील साहित्य ने हमारी शिक्षा का गला घोंट दिया। ये नाटक···ये फिल्म !

[दोनों भीतर भागते हैं।]

रामप्रसाद : अच्छा जी मास्टर साहब, अब मैं चला ! जरा हँस दीजिए ! जरा-सा ! सुनिए···जरा-सा !

मास्टर : चुप रहिए ! मुझे क्रोध चढ़ आया है ! मैं बिलकुल नहीं हँस सकता ! क्या समझ रखा है, इन लौंडों ने ! आखिर मैं भी बीस वर्षों तक अध्यापक रहा हूँ। मेरे पढ़ाए हुए लड़के···!

रामप्रसाद : (पुकारकर) कोई है ! मास्टर साहब को शीतल जल पिलाओ ! नमस्ते मास्टर साहब ! (जाते हैं।)

मास्टर : (आवेश में) नमस्ते !

[पृष्ठभूमि में 'माउथ आर्गन' बजता है।]

मास्टर : अयँ ! अयँ ! यह कौन बजा रहा है ? कहाँ से यह···?

[सहसा मिली हुई हँसी उभरती है।]

मास्टर : अयँ ! यह हँसी कहाँ से आ रही है ? कौन है ? कौन हैं आप लोग ?

[तीन विद्यार्थी आते हैं।]

एक : मास्टर साहब नमस्ते !

दूसरा : नमस्ते साहब !

तीसरा : नमस्ते जी !

मास्टर : हूँ···हूँ हूँ ! ठीक है ! क्या बात है ? बोलो न !

दिनेश : जी, हम लोग कॉलेज के विद्यार्थी हैं···मेरा नाम है दिनेश, ये हैं रमेश, और यह हैं सुरेश···।

[फिर तीनों एकसाथ नमस्ते करते हैं।]

मास्टर : ओ हो ! हो चुका नमस्ते ! कितनी बार करेंगे आप लोग नमस्ते ! आगे बढ़िए ···आगे ! बात क्या है ?

दिनेश : बात यह है जी कि, हमारे कॉलेज में 'पूअर बॉएज फण्ड' की ओर से···।

रमेश : जी हाँ, एक जलसा होने जा रहा है।

मास्टर : हूँ···आगे चलिए !

सुरेश : जलसा नहीं, बल्कि 'वेराइटी इण्टरटेनमेण्ट' हो रहा है।

दिनेश : 'वेराइटी इण्टरटेनमेण्ट', नहीं मास्टर साहब 'कल्चरल शो' होने जा रहा है।

मास्टर : तो ? फिर क्या ?

दिनेश : यह एक 'डीनर्स टिकट' हम आपकी सेवा में ले आए हैं, कृपया इसे ले लीजिए !

रमेश : आपसे हम कम से कम दस रुपये की आशा लेकर आए हैं।

सुरेश : आप-जैसे त्यागी, महात्मा पुरुष से हम विशेष और क्या कहें !

मास्टर : और क्या कहें ? अरे गाली दीजिए···और क्या कहेंगे !

दिनेश : अरे मास्टर साहब ऐसा न कहिए !

रमेश : आप कुछ नाराज लग रहे हैं मास्टर साहब !

मास्टर : आप लोगों से मतलब। वह फाटक देख रहे हैं न !

दिनेश : जी हाँ, जी !

रमेश : जी जी !

सुरेश : हाँ हाँ···!

मास्टर : उसी से फौरन बाहर निकल जाइए !

दिनेश : अरे मास्टर साहब—ऐसा न कीजिए !

मास्टर : 'पूअर बॉएज फण्ड' और 'वेराइटी इण्टरटेनमेण्ट ! रोजगार बना रखा है अपना। यही कल्चरल शो है तुम्हारा ? 'ह्वॉट डू यू मीन बाई कल्चर' ? 'ह्वॉट इज कल्चर' ? मेरा मुँह क्या देख रहे हो ? बोलो न ? ह्वाट इज कल्चर ?

दिनेश : जी, जी···हिन्दी में पूछिए !

मास्टर : संस्कृति क्या है ?

रमेश : जी जरा सरल हिन्दी में पूछिए !

मास्टर : तुम्हारे बाप का क्या नाम है ?

सुरेश : बाप ! अरे बाप रे बाप ! मेरे बाप का नाम है···उसे क्या कहते हैं जी, तीर्थ का नाम है वह···अच्छा ही नाम है···अभी बता रहा हूँ जी···काशी···अयोध्या वह···वह···व···ss···।

मास्टर : (**क्रोध से**) चले जाओ यहाँ से ! दिनेश···रमेश···सुरेश···फिल्मी हीरो बने चार-सौ बीसी करते घूमते हैं !

[तीनों घबराए हुए जी···जी···'सॉरी' 'वेरी सॉरी···माफ कीजिए जी' कहते रहते हैं।]

मास्टर : यह तुम्हारे हाथ में क्या है ?

दिनेश : (**डरा हुआ**) बाजा है ही···(**बजा देता है**) बाजा है, माउथ आर्गन इसे कहते हैं।

मास्टर : चलो बाजे का तो नाम मालूम है; पिता का नाम नहीं सही।

रमेश : नहीं जी, नहीं, हम लोग जा रहे हैं। थैंक्यू वेरी मच ! जाते समय हम लोग बाजा नहीं बजाएँगे ! सच···सच···!

[जाते हैं तीनों।]

मास्टर : सिनेमा देखने के लिए पैसे चाहिए ! अपनी मूर्खता और बेईमानी के दृश्य को 'कल्चरल शो' का नाम देने चले हैं।

[दूर पर माउथ आर्गन बजता है।]

शिव : (**भीतर से आते हुए**) क्या है पिताजी ! कौन हैं वे लड़के जो इस तरह बाजा बजाते हुए जा रहे हैं ?

सुमन : (**तेजी से आकर**) क्या है पिताजी ?

मास्टर : मेरा सिर है ! फिर तुम लोग बाहर चले आए···? चलो···अन्दर कमरे में बैठकर किताबें पढ़ो ! चलो···। क्या खड़े सुन रहे हो ? चलो···।

शिव : (अपने-आप) हमारे ड्रामे के लिए यह 'बैकग्राउण्ड म्यूजिक' अच्छी रहेगी ! क्यों सुमन, ठीक है न !

सुमन : बिलकुल ठीक कहते हो तुम···(**दोनों भीतर जाते हैं।**)

[पृष्ठभूमि में वही संगीत। मास्टर साहब भी भीतर जाते हैं। कुछ ही क्षणों बाद बाहर से 'ब्रदर' और 'सिस्टर' का रहस्यमय ढंग से प्रवेश।]

ब्रदर : (**अस्फुट स्वर में**) सिस्टर ! सिस्टर ! देखो ड्राइंग रूम खुला हुआ है !

सिस्टर : ड्राइंग रूम ही नहीं, साइड रूम और शायद 'बेडरूम' भी···।

ब्रदर : जल्दी करो जल्दी ! सुनो, हम लोग मेहमान की तरह धड़धड़ाकर कमरे में घुस पड़ें। जो भी हाथ लगे, बस एक मिनिट में चुर्राइट ! जल्दी करो···!

सिस्टर : सावधान ! 'वेरी कांसेस' !

ब्रदर : बँगला मालदार है; यस् चुर्राइट !

सिस्टर : बी सीरियस ब्रदर···!

[दोनों भीतर घुसकर चीजें चुराते हैं। भीतर कोई चीज गिरती है। कुछ खड़खड़ाहट होती है। दोनों भाग कर छिपते हैं।]

मास्टर : (**पृष्ठभूमि से**) कौन ? शिवशंकर, सुमन ! कौन है कमरे में ? बाहर आकर ···अरे ! कौन हैं आप लोग ? भागते कहाँ हो···चोर···चोर···! बस, अपनी जगह पर खड़े रहिए !

शिव : (**भीतर से दौड़ता हुआ आता है**) कौन हैं ये लोग ?

मास्टर : नये ढंग के चोर···!

सुमन : (**भीतर से**) आह ! मेरी घड़ी···फाउण्टेन पेन !···

मास्टर : दरवाजा बन्द कर लो !

[बाहर का दरवाजा शिव बन्द करता है।]

ब्रदर : प्लीज···प्लीज ! साहब दरवाजा क्यों बन्द करते हैं ? हम लोग कोई चोर हैं, जो भाग जाएँगे ! 'वी आर ऑनरेबल सिटीजन' ! सी इज लेडी ! फेयर···!

मास्टर : जी हाँ, शिवशंकर, पुलिस को झट टेलीफोन तो करो !

ब्रदर : सुनिए तो···इतना घबराइए नहीं···हम लोग कहीं भागे नहीं जा रहे हैं।

सिस्टर : हम लोग तो खुद आप लोगों से मिलने आए हैं।

ब्रदर : मीट माइ सिस्टर. मिस मोहनी बाला; एण्ड आइ एम हर ब्रदर—मिस्टर, एम० एम० कपूर ! हम लोगों को आप गलत मत समझिए ! प्लीज···मीट माइ सिस्टर !

सिस्टर : हाउ डू यू डू ! आइ एम वेरी ग्लैड टू मीट यू !

ब्रदर : हमें आप सबसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई। हम लोग 'सोप ऐण्ड पाउडर ब्रदर्स' के एजेण्ट्स हैं। टेक योर सीट प्लीज !

मास्टर : बस, खड़े रहो अपनी जगह पर। तो आप लोग 'सोप एण्ड पाउडर ब्रदर्स' के एजेण्ट्स हैं ?

ब्रदर : जी हाँ, यह देखिए हमारा लिट्रेचर ! डोण्ट बी प्रिजुडिस सर ! मतलब यह कि हमें आप लोगों को इस साबुन पाउडर के बारे में पूरी जानकारी करानी है ! दिस इज आंवर ड्यूटी ! वी आर हाइली पेड फॉर दिस।

सिस्टर : हम कम्पनी के एजेण्ट और एडवरटाइजर्स हैं। हमारा हेड क्वार्टर बम्बई है ! यहाँ का मौसम बहुत कोल्ड है ! आइ एम सो सॉरी···!

सुमन : आपने हमारी घड़ी क्यों उठायी ? मेरी रिस्टवाच···!

शिव : और यह टाइम पीस भी ! वह मूर्ति तोड़ दी !

ब्रदर : ओह ओ ! सुनिए तो माइ डियर ! आइए···मेरे पास आइए। टेक योर सीट प्लीज !

मास्टर : जल्दी से पुलिस बुलाओ, मैं कहता हूँ···इनकी बातों में मत आओ ! ये मामूली लोग नहीं हैं।

ब्रदर : ओह हो ! सुनिए तो ! 'हैव पेशेन्स प्लीज।' भला आपकी इन घड़ियों की हम चोरी करेंगे। सुनिए प्लीज ! जब हम इधर से आपके इस ड्राइंग रूम में आया, तो पहले हमने आवाज दी !

मास्टर : जबान चलाते हुए शर्म नहीं आती ?

ब्रदर : सॉरी। सिस्टर तुम बोलो !

सिस्टर : हाँ तो हम लोग यहाँ खड़े हो गए ! आपकी दोनों घड़ियाँ गलत चल रही थीं !

ब्रदर : गलती सुधारना हमारा फर्ज है जी ! वी आर हाइली पेड फार इट ? हमारी बहन के पास वाच कम्पनी की भी एजेंसी है !

सिस्टर : हाँ तो मैं दोनों घड़ियों का टाइम ठीक करने लगी ! अब देखिए, मेरी घड़ी से मिलाइए···अब ये करेक्ट टाइम दे रही हैं कि नहीं !

सुमन : हाँ पिताजी, ठीक तो है ! आप ठीक कह रही हैं।

सिस्टर : धन्यवाद !

ब्रदर : थैंक्यू वेरी मच ! यू आर ऑलसो माइ सिस्टर !

मास्टर : जबान बन्द करो ! अगर मैं समय से यहाँ न आ गया होता तो यह सब कुछ साफ हो गया था। ये दोनों घड़ियाँ, वे दोनों फाउण्टेनपेन···और दिखाओ क्या-क्या है ? हाथ ऊपर करो !

ब्रदर : डोण्ट वी ऐंग्री प्लीज ! गुस्सा करने से ब्लड प्रेसर बढ़ता है। वी आर आपटर ऑल फ्रेण्ड्स ! मिस्टर शिवशंकर बाबू, मीट माइ सिस्टर···आप इतना चुप क्यों हैं ?

शिव : शटअप !

ब्रदर : बैग योर पार्डन सर ! मतलब क्या कहा आपने ?

मास्टर : हाथ ऊपर उठाओ ! देखो सब···।

ब्रदर : यस् बाई ऑल मीन्स···माई कार्ड्स आर आलवेज ओपन सर !···लीजिए मैंने हाथ ऊपर उठा लिया। ठीक है न ! इन फैक्ट, यू आर मिस गाइडेड सर ! हम लोग बहुत शरीफ आदमी हैं जी ! मेरी सिस्टर को कम्पनी 500 रु० महीने देती है—फर्स्ट क्लास टी० ए०। आइ गैट फोर हण्ड्रेड ! बैग देख लीजिए···इसमें पाउडर···और साबुन है ! कम्पनी का लिट्रेचर है सिर्फ !

मास्टर : (सिस्टर से) हूँ ! तुम हाथ ऊपर उठाओ।

ब्रदर : नो नो प्लीज ! लेडीज काण्ट डू दैट ! गैर-मुमकिन !

मास्टर : चुप रहो।

[सिस्टर रोने लगती है।]

ब्रदर : सिस्टर रोओ नहीं। घबराओ नहीं। ये लोग बहुत शरीफ आदमी हैं। देखिए जी, आप खुद समझिए, लड़की होकर यह अपने दोनों हाथ ऊपर कैसे उठाएगी ? आप खुद समझिए डिफिकल्टी ! सिस्टर, मत रोओ ! दे डोण्ट डू !

सुमन : पिताजी, जाने दीजिए, ये लोग चोर नहीं हैं।

ब्रदर : थैंक्यू वेरी मच सिस्टर ! आफ्टर ऑल सिस्टर इज सिस्टर।

सिस्टर : बहनजी, भीतर से आप थोड़ा-सा पानी लाइए···हम अपने पाउडर का डिमान्सट्रेशन देगा ! कितना उम्दा पाउडर है फादर !

ब्रदर : एक सेर पानी में एक चम्मच पाउडर। पानी में धीरे से पाउडर डालकर धीरे-धीरे उस पानी में इस माफिक हाथ चलाइए···जैसे पानी में मछली तैरती है। फिर हौले-हौले उसमें से झाग उठेगा···इतना ऊँचा झाग, जैसे पूर्णमासी की रात को समुद्र में ज्वार उठता है···फिर उसमें गन्दे-से-गन्दे कपड़े डालिए···!

सुमन : (भीतर से पानी लाकर) लीजिए यह पानी !

ब्रदर : जाइए, अब आप लोग अपने सारे गन्दे कपड़े लाइए !

सिस्टर : जाड़े के दिन हैं···तेल-मालिश से कपड़े अक्सर गन्दे हो जाया करते हैं। धोबी जवाब दे देते हैं···। यह पाउडर खास तौर से तेल की गन्दगी को धोता है !

मास्टर : रुको, मैं अपने कपड़े ले आता हूँ···शिवशंकर देखना तुम···खबरदार···! (भीतर जाते हुए) सुमन, यहाँ चलो जल्दी !

सुमन : आयी पिताजी ! (प्रस्थान)

सिस्टर : ओह फादर ! यू आर सो गुड ! डियर शिव ब्रदर ! आप अपनी गन्दी टाइयाँ, लाइए ; यू लुक सो लव्ली ! हाउ गुड यू आर ! प्लीज···!

शिव : आप तो ड्रामे में बहुत अच्छा पार्ट कर सकती हैं।

सिस्टर : यस्···वण्डरफुल बम्बई में रहती तो हूँ अक्सर स्टेज पर उतरती हूँ। दो-एक फिल्मों में भी आयी हूँ। क्यों, आप कोई ड्रामा करने जा रहे हैं क्या ?

[पृष्ठभूमि से मास्टर साहब की आवाजें आती रहती हैं—'सुमन जल्दी जाओ ! शिवशंकर देखना···मैं आ रहा हूँ।']

शिव : जी हाँ, आप अभी तो इस शहर में दो-चार दिन जरूर रुकेंगी।

सिस्टर : जी हाँ, एक हफ्ता रुकूँगी।

शिव : आप हमारे एक ड्रामे में पार्ट ले लेंगी ?

सिस्टर : जैसा आप कहेंगे ! आपके ड्रामे में मैं जरूर भाग लेना चाहूँगी ! आइ लव टू एक्ट !

शिव : ओह, वण्डरफुल ! मैं स्क्रिप्ट ला रहा हूँ।

ब्रदर : जी, थैंक्यू वेरी मच।

[शिव का भीतर प्रस्थान। ब्रदर और सिस्टर का बाहर भागना। भीतर से मास्टर साहब का कपड़ा लिए प्रवेश।]

मास्टर : अरे ! कहाँ गए तुम लोग ? सुमन ! शिव···!

सुमन : (**भीतर से आकर**) कहाँ हैं वे ? अरे···

मास्टर : शिवशंकर !

शिव : (**प्रवेश कर, हाथ में 'स्क्रिप्ट' है**) अरे। कहाँ गए वे ?

मास्टर : है। तो आप अपने ड्रामा की कॉपी लेने गए थे। तुम्हें हीरो बनाकर वह बम्बई की हिरोइन चली गयी। (**हँस पड़ते हैं**) हँसूँ कि रोऊँ ! समझ नहीं पाता।

रामप्रसाद : (**बाहर से आकर**) हँसिए जो। रोएँ हमारे दुश्मन !

मास्टर : सुबह तुम हँसा गए थे मिस्टर गजट ! बड़ा अच्छा किया था···हाय ! क्या से क्या जमाना आ गया ! सच मानो मिस्टर रामप्रसाद जी, अभी यहाँ बात-ही-बात में ऐसा पुरलुत्फ ड्रामा हो गया कि···(**हँसी आ जाती है**) बताता हूँ अभी···। सुनो···सुनो तो···ऐसा हुआ कि (**हँसी में बात रुक जाती है।**)

[परदा]

ठण्डी छाया

पात्र

गोली
माँ
पप्पू
प्रताप
कमला
कान्ती

[रात का सन्नाटा। वर्षा हो रही है। दूर से एक ताँगा आने की आवाज, ताँगा रुकते ही बन्द किवाड़ पर कोई दस्तक देने लगता है।]

स्त्री स्वर : किवाड़ खोलो ! खोलो जल्दी !!

गोली : कौन ?

स्त्री स्वर : किवाड़ खोलो !

गोली : (**किवाड़ खोलकर आश्चर्य से**) आप !

स्त्री स्वर : (**घबराहट से**) हाँ, पहचानते नहीं ? मैं कान्ती हूँ। (**रुककर**) अरे ! तू इस तरह क्यों देख रहा है ? सामने से हटता क्यों नहीं ? मैं अन्दर जाऊँगी।

गोली : (**गम्भीरता से**) नहीं जी ! आप इस समय अन्दर नहीं जा सकती।

स्त्री : मुझे पहचान भी रहा है ? मैं कान्ती हूँ।

गोली : खूब पहचान रहा हूँ, आवाज से भी, रूप से भी।

स्त्री : तो !

गोली : तो क्या ? पहचान, समझ-बूझकर ही कह रहा हूँ, इस वक्त आप अन्दर नहीं जा सकतीं !

स्त्री : क्यों ?

गोली : सब सो रहे हैं, कहीं और रात काटकर सुबह आइए !

स्त्री : (**अधिकार से**) बेवकूफ कहीं का, देख भी रहा है कि बारिश हो रही है।

गोली : देख रहा हूँ। मैं क्या करूँ ?

स्त्री : सामने से हट ! मैं खुद पुकार लूँगी, तेरे मालिक को।

गोली : (**चुप रहने के लिए मुँह से निःशब्द संकेत करता है**) चुप रहो !···चुपचाप चली जाओ, बेहतर होगा।

[इतना कहकर झट दरवाजा बन्द कर लेता है। वर्षा के बीच से ताँगे के लौटने की आवाज दूर चली जाती है। धीरे-धीरे पृष्ठभूमि से बहुत तेज हवा बहने की आवाज उभरती है और उसके बीच एक लम्बी चीख उठती है। जहाँ चीख खत्म होती है, वहाँ से एक पुरुष-स्वर लम्बी-लम्बी साँसें भरता हुआ, जैसे कराहने-सा लगता है।]

पुरुष स्वर : (**साँसें भरता हुआ**) माँ, ओ माँ ! जागो···जल्दी जागो माँ। रोशनी करो···बिजली जलाओ !

माँ : क्या है परताप ? बेटे परताप !

प्रताप : पानी पिलाओ···मेरा दम घुट रहा है !

माँ : यह लो पानी !···क्या हो गया ?

प्रताप : (**पानी पीकर साँस छोड़ता हुआ**) कुछ नहीं, मुझे श्राप चाहिए।···श्राप चाहिए। श्राप चाहिए !

माँ : नहीं, नहीं, चुप हो जाओ···बोलो नहीं। आओ, मेरी गोद में सिर रखकर सो जाओ। (**रुककर**) तू क्यों इस तरह देख रहा है बेटा ? ऐसे न देख···मुझे देख··· मुझे देख !

[क्षणिक अन्तराल।]

प्रताप : (**सम स्वर से**) बाहर वर्षा हो रही है !

माँ : हाँ, लगता तो है।

प्रताप : कमला कहीं भीग रही होगी माँ। अभी यहाँ खड़ी थी, अभी-अभी भागकर गई है।

प्रताप : कमला तो राख हो गई बेटे। वह क्या भीगेगी ? जो सदा के लिए चली गई, उसे लेकर क्यों पागल हो रहे हो ? सो जाओ। मैं बैठी रहूँगी, तुम सो जाओ !

[क्षणिक अन्तराल।]

प्रताप : मेरे पाप से उसकी पवित्र आत्मा भटक रही है माँ !

माँ : क्या बकता है तू ?

प्रताप : सच कह रहा हूँ। मैं केवल तुमसे अपने सत्य को बता रहा हूँ, कमला ने आत्म-हत्या की है माँ !

माँ : (**घबराकर**) ऐसा मुँह से न निकाल परताप। बहुत बुरा होगा। उसके पाप को तू क्यों अपने सिर ओढ़ता है ? क्यों गड़ी लाश उभारता है। जो कोई स्वप्न में भी नहीं सोचता, शहर का कोई एक आदमी तक ऐसा नहीं कहता, उसे तू सोचता है, नासमझ !

प्रताप : जिस पर बीती है, उसे तो सोचना ही होगा। वह कहाँ भागकर जाएगा ? किसकी शरण जाएगा ?···मैं स्वय अपने को नहीं क्षमा कर पा रहा हूँ। (**रुककर**) कमला आई थी, यहाँ दीवार से लगी खड़ी थी।

माँ : (**सँभालती हुई**) उठो नहीं, लेटे रहो···उठो नहीं···भागो नहीं परताप।

प्रताप : यहाँ खड़ी थी। यहाँ उसका सिर टिका था। आओ···इसको छुओ···यहाँ छुओ, जहाँ मेरी दायीं हथेली है···कितनी ठण्डी है यह जगह। यहीं वह सिर टिकाए खड़ी थी। (**रोने लगता है।**)

माँ : (**घबराहट से**) क्या करता है तू ? पुरुष होकर रोता है ? जो बीत गई, बीत गयी।

प्रताप : यहाँ खड़ी थी चुपचाप। सारा बदन जला हुआ था। बड़े-बड़े घाव थे, आँखें नहीं थीं। नहीं थीं, वे सब नहीं थे···बस घाव थे।···बस···

माँ : (**पुकारने लगती हैं**) गोली, गोली ! दौड़ो यहाँ !

[घबराया हुआ गोली आता है।]

गोली : क्या है ? अरे, मालिक जग गए ?

माँ : देख गोली, इसका पागलपन। समझा इसे ! कहता है कमला आग की घटना से नहीं जली। आत्महत्या की है उसने। यह बात इसके मुँह से फैलेगी, तो पूरा शहर क्या कहेगा ?

प्रताप : हाँ, तुम दोनों मुझे समझाओ। मैं तुम दोनों के पैर पड़ता हूँ। कमला को मरे आज पूरे ढाई महीने हो गए। पूरा शहर शान्त है। गली, मुहल्ले, पुलिस चौकी, कोतवाली, भरे हुए पंचनामे—सब चुप हैं। मैं निदाग बचा हूँ। लेकिन मेरे भीतर के सत्य को कौन चुप कराएगा ? मेरा सत्य स्वयं मुझे कैसे क्षमा करेगा ?

गोली : सो जाओ सरकार। सोचो नहीं, सब भूल जाएगा !

माँ : मुए उस मकान को भी हमने छोड़ दिया। इस नये मकान में भी आए, लेकिन···

प्रताप : लेकिन सत्य से हम कहाँ भागकर जायेंगे ! उस छाया से हमारा कैसे पीछा छूटेगा। (**रुककर**) गोली, आ तू भी देख, यहाँ दीवार को छू, कितनी ठण्डी जगह है। छूकर तो देख !

माँ : गोली ! जा तू यहाँ से ! जा सो अपनी जगह !

[गोली चला जाता है।]

माँ : पागल मत हो परताप। राम-राम कर ! कहीं भी तेरा दोष नहीं है। जो तू सोचता है, वह संसार का कोई नहीं सोच सकता। निष्पाप है तू। तेरा कोई कुसूर नहीं, ऐसा हो जाता है।

प्रताप : माँ, ऐसा हो जाता है ! मैं निष्पाप हूँ ! (**हँस पड़ता है और हँसते-हँसते रो पड़ता है**) अपने बेटे के लिए तू न ऐसा कहोगी, तो और कौन कहेगा ? (**रुककर**) लेकिन जो मेरा सत्य है, उसे संसार क्या जाने !···माँ, तू भी नहीं जानती।··· कमला ने किसी से कभी कहा ही नहीं। शायद अपने से भी न कहा होगा। (**एकाएक घबराहट के स्वर में**) जलकर उसने संसार से यही कहा···'स्टोव से आग लग गई' ! लेकिन आग लगी क्यों ? वह मर क्यों गई ? यह आज मैं जानने लगा हूँ। मैं सोचता हूँ। मैं साफ-साफ देखता हूँ। वह कैसे मरी, मैं हरदम देखता रहता हूँ।

[हलके उदास संगीत द्वारा परिवर्तन।]

स्त्री स्वर : (**दूर से पुकारती हुई**) गोली···ओ रे गोली !

गोली : (**आता हुआ**) क्या है बहूरानी ? (**रुककर**) ओ हो ! खूब रही, मैं आपको ढूँढ़ता फिरूँ, आप मुझे ढूँढ़ें।

कमला : पप्पू कहाँ है ?

गोली : पप्पू ! पप्पू स्कूल गए होंगे।

कमला : बेखबर रहते हो ? कहाँ वह स्कूल गया ? देखो न, किताबें यहाँ पड़ी हैं, कपड़े

वहाँ टँगे हैं। (रुककर) खेल रहा होगा कहीं।

गोली : लेकिन यह मजाक ! अभी ढूँढ़कर लाता हूँ, जायेंगे कहाँ ?

[पृष्ठभूमि से एक आठ वर्ष के बच्चे की आवाज आती है। 'माताजी, माताजी।']

कमला : वह देखो, पप्पू आ गया।

गोली : हुजूर ! मैं तो आप ही को ढूँढ़ने जा रहा था।

कमला : कहाँ था तू ? कब से भटकना सीख लिया ? आज पढ़ने नहीं जाएगा क्या ?

पप्पू : (गम्भीरता से) नहीं जाऊँगा (रुककर), आज ही नहीं, अब कभी नहीं जाऊँगा।

कमला : अरे ! क्यों ? क्या बात है ?

पप्पू : नरेश बाबू के पास साइकिल है। वे साइकिल से कॉलेज जाते हैं, मैं भी साइकिल लूँगा, तभी स्कूल जाऊँगा। नहीं तो नहीं जाऊँगा, हाँ !

[माँ हँस पड़ती है।]

गोली : नरेश बाबू तो एफ० ए० में पढ़ते हैं।

पप्पू : मैं भी पाँचवीं में पढ़ता हूँ। मेरे लिए उनसे छोटी मँगा दो, और क्या ?

कमला : (प्यार से) इतने छोटे बच्चे कहीं साइकिल चलाते हैं ! नरेश बाबू तो उतने बड़े हैं। मोटे, हट्टे-कट्टे ! (रुककर) गोली, जाओ, पप्पू भइया को साइकिल से स्कूल छोड़ आओ।

पप्पू : ऐसे नहीं जाऊँगा।

कमला : मान जाओ राजा बेटे ! आज रात को हम लोग पापाजी से साइकिल के लिए कहेंगे। (एक जिज्ञासा से) गोली ! कहाँ गए हैं वे लोग ?

गोली : मास्टर साहब और कान्तीजी ?

कमला : हाँ।

गोली : पता नहीं, बाजार की ओर जाते देखा है।

पप्पू : (खुशी से) पापाजी बाजार गए हैं ?

गोली : हाँ, साइकिल देखने गए हैं (रुककर) पापाजी कहते हैं जो स्कूल जाएगा, उसे साइकिल मिलेगी।

पप्पू : अच्छा मैं जा रहा हूँ। स्कूल जा रहा हूँ। देखो, जा रहा हूँ न !

गोली : हाँ, ठीक है'''बाई-बाई !

[पप्पू चला जाता है।]

कमला : देखो गोली, इस बात का ध्यान रखा करो, पप्पू से झूठ न बोला करो। उस पर बुरा प्रभाव पड़ सकता है। (रुककर) पता है, एक दिन मुझसे कह रहा था, कान्तीजी तो मुझे प्यार नहीं करतीं, तो पापाजी और तुम कान्ती के भाई नरेश को क्यों इतना प्यार करते हो ?

गोली : बात तो बड़े पते की थी।

कमला : लेकिन अभी से ये बातें बच्चे क्यों सोचने लगें ? (रुककर) एक दिन पूछ रहा

था, कान्तीजी पापा की धर्म-बहन लगती हैं, तो मेरी क्या लगेंगी ? मैं चुप रह गई। क्या जवाब देती ?

गोली : बहूजी ! माफ कीजिए, यह बात तो मैं भी आज तक नहीं समझ सका।

कमला : क्या ?

गोली : धर्म-बहन किसे कहते हैं ? कान्तीजी भी हमारे साहब को धर्म-भाई कहती हैं।

कमला : (गम्भीरता से) यह एक रिश्ता है···जो सगे भाई-बहन से भी ऊँचा है। (रुककर) एक भाई-बहन वे हैं, जो एक माँ-बाप से पैदा होकर भाई-बहन के धर्म पर एक होते हैं।

गोली : ओ हो ! यह बात है···वहाँ खून का रिश्ता है, यहाँ धर्म का···जभी-जभी, अब समझा !

कमला : (गम्भीरता से) जभी-जभी क्या ? बोल, क्या सोच रहा है ?

गोली : (घबराकर) कुछ नहीं···नहीं···यही···कि हमारे साहब अपनी बहन को कितना मानते हैं (रुककर) कान्तीजी भी कहीं पढ़ाती हैं न ?

कमला : सुनते तो हैं कि प्रोफेसर हैं देहरादून में।

गोली : (आश्चर्य से) बहुत तनख्वाह पाती होंगी।···देहरादून। ओह !

[कमला चुप रहती है।]

गोली : जभी बड़े ठाठ हैं। (रुककर) लेकिन बहूजी ! कान्ती जी छोटे भाई नरेश बाबू को अपने संग क्यों नहीं रखतीं ? सगा भाई और धर्म-भाई···ये···।

कमला : (झुँझला उठती है) क्या बकता है ? जाओ, अपना काम करो। बेमतलब की बातें नहीं करनी चाहिए। इन बातों से मुझे क्या मतलब ?

गोली : भूल हो गयी बहूजी। माफी चाहता हूँ।

कमला : माफी की कोई बात नहीं। बस, पूछना नहीं चाहिए। हमसे क्या मतलब ! (रुककर) देखो, घड़ी में क्या बज गया ?

[क्षणिक अन्तराल।]

गोली : साढ़े आठ से ऊपर हो रहा है।

कमला : साढ़े आठ से ऊपर ! (रुककर) मेरा बिस्तरा ठीक कर दो। मैं लेटूँगी। न जाने कैसी तबीयत हो रही है।

गोली : चाय बना जाऊँ ?

कमला : नहीं, कुछ नहीं। मैं चुपचाप लेटूँगी। मुझे कोई न बुलाए। (रुककर) ठीक हो गया। बस, जाओ।

गोली : बहूजी, भोजन के लिए क्या होगा ?

कमला : मैं क्या बताऊँ ? (झुँझलाहट से) मुझसे ये बातें मत पूछा करो। थक गयी मैं। (रुककर) जो सूझे करो, नहीं तो बैठे रहो। अकेली मेरी गृहस्थी नहीं है।

[सहसा पृष्ठभूमि से एक जीवन्त हँसी उठती है, उसमें एक स्त्री दूसरे पुरुष के स्वर सम्मिलित हैं।]

प्रताप : गोली !

गोली : जी !

प्रताप : ये सामान रखा··· क्या कर रहे थे ?

गोली : भोजन बनाने जा रहा हूँ।

प्रताप : हूँ ! बहू की तबीयत खराब हो गयी होगी। हूँ ! मुझे उनकी तबीयत का हाल मालूम है। मुझे पता था कि उनकी तबीयत खराब होगी।

कान्ती : उन कपड़ों को यहीं मेज पर रख दो। बाकी सामान मेरी अटैची में डाल दो।

प्रताप : नौ बज गए।

कान्ती : तो क्या हो गया। अभी भोजन बन जाता है। मैं बनाती हूँ।

प्रताप : तुम तो बनाओगी ही। जब-जब आती हो, यही होता है। मैं कितना बदनसीब हूँ कान्ती। घर आए हुए किसी मेहमान को मैं···।

कान्ती : मैं मेहमान नहीं हूँ भाई। ऐसा क्यों सोचते हो ?

प्रताप : क्यों सोचता हूँ हटाओ।···गोली !

गोली : हाँ साहब।

प्रताप : क्या हो गया तुम्हारी बहू को। (**व्यंग्य से**) सिर-दर्द होगा, बुखार थोड़ा-थोड़ा चढ़ आया होगा। (**रुककर**) बीमारी उनके लिए क्या है, जब चाहा तब सूँघ लिया।

कान्ती : ओहो ! क्या झूठमूठ सिर खपाने लगे ! तबीयत ही तो है, खराब हो गयी होगी।

प्रताप : तबीयत।···और मेरी तबीयत।

[एक बरतन गिरने की आवाज होती है।]

प्रताप : (**गुस्से में**) मैं कहता हूँ, मत जाओ चौके में। भोजन बनाने चले हैं ? किसी चीज की तमीज भी है ! (**रुककर**) जी होता है कि बेंतों से उड़ा दूँ।

[कमरे से सहसा कमला की आवाज आती है।]

कमला : आखिर क्यों ? उसे क्यों ! मुझे क्यों नहीं उड़ा देते बेंतों से ? उड़ना तो मैं चाहती हूँ। जिस पर गुस्सा हो, उसी पर बरसो, नौकर का क्या दोष ?

प्रताप : (**व्यंग्य से**) तो अच्छी हो गयी बीमारी ?

कमला : तुमसे मतलब ! तुमसे मैंने कभी नहीं कहा कि मैं बीमार हूँ, कैसी भी हूँ, जो हूँ सो अपने लिए हूँ। सब सह लूँगी, किसी से कहने न जाऊँगी।

प्रताप : बकवास न करो। यह कहो कि बस लड़ने के लिए हूँ।

कमला : तुम्हीं यह कहो। तुम्हीं को यह शोभा देता है। यह घर, यह गृहस्थी, ये··· दीवारें···इस शोभा में हाथ रँगे बैठी हैं।

प्रताप : और तुम भी रँगी हो।

कमला : भविष्य बताएगा, कौन रँगा है; कहने से क्या ?

प्रताप : भविष्य क्या बताएगा ? मुझे सब पता है !

कान्ती : क्या झूटमूट मुँह लगते हो ? चुप नहीं रहा जाता ? औरत की इतनी भी नहीं सह सकते ?

प्रताप : यहाँ सहने का प्रश्न नहीं है। इसकी आदत है, घर में कोई मेहमान आए इसे छिपकली छू लेती है। घर को झट सिर में उठा लेती है। आदत है इसकी। इसकी नस-नस मैं जानता हूँ। इसकी सारी आदत।

कमला : मेरी एक ही आदत है, पर बहुत बुरी। (रुककर) मैं बेहद औरत हूँ, बिलकुल औरत। (रुककर) कान्तीजी, आप इसे समझ रही हैं ? आप औरत नहीं हैं क्या ?

गोली : किससे बातें कर रही हैं आप ?

कमला : ओह ! वे लोग बैठक में चले गए ?

गोली : और क्या ?···कान्तीजी आज जा रही हैं। साहब उन्हें छोड़ने शायद बरेली तक जाएँ।

कमला : कौन कह रहा था ?

गोली : मुझे लगता है।

कमला : (बिगड़कर) तुझे मेरा सिर लगता है ! कभी-कभी तू बेकार बकने लगता है। गोली ! (रुककर) जाओ साहब से कहो, स्नान करें, भोजन तैयार हो रहा है।

[क्षणिक अन्तराल।]

कान्ती : उनकी तबीयत ठीक नहीं, बेचारी कैसे भोजन बना लेगी।

प्रताप : भोजन बनाने में क्या है। और कमला सीधी औरत है। कोई गाँठ नहीं रखती। जो आता है बक जाती है, पर है सीधी।

कान्ती : कब से गोली कह रहा है, जाओ स्नान तो कर लो।

प्रताप : आज न सही स्नान, कल कर लूंगा, जब तुम देहरादून पहुँच चुकी रहोगी।

कान्ती : (तेजी से) ओहो ! साढ़े नौ बज गए, मैं अपने कपड़े तो बदल लूँ। (रुककर) गोली ! होल्डॉल बाँधो। नरेश कब कॉलेज से आता है ?

प्रताप : तुम अपना काम करो। अभी नरेश आ जाएगा। भोजन तैयार हो रहा है। होल्डॉल बँध चुका, मैं ट्रंक और अटैची ठीक कर रहा हूँ। चिन्ता किस बात की ? जाओ न, खड़ी क्या हो ?

गोली : सब तैयार हो गया साहब।

प्रताप : जाओ खाना लगाने की तैयारी करो। सुनो, दौड़कर दो रुपये के सन्तरे लेते आओ। टमाटर वगैरह है न ?

गोली : नहीं।

प्रताप : कोई मिठाई, दही ? (रुककर) सबके लिए सिर हिलाते हो ! यह लो दस रुपये, दौड़कर सब सामान लाओ; फिर खाने के लिए आवाज दो।

['अच्छी बात है' कहकर चला जाता है।]

प्रताप : कमला, सुनती हो कमला ? सुनो तो !

कमला : कुछ कहोगे भी, क्या है ?

प्रताप : कान्ती हठ कर रही है। मुझे बरेली तक उसे छोड़ने जाना पड़ेगा। वहाँ गाड़ी बदलने में बड़ी परेशानी होती है।

कमला : तो मैं क्या करूँ ! जो चाहो करो न ! मुझसे क्या पूछते हो ? मैं क्या हूँ ?

प्रताप : तुम हो क्यों नहीं ? नहीं तो पूछता ही क्यों ? (रुककर) बोलो क्या कहती हो ? कमला, बोलो न !

कमला : जाओ, लेकिन एक शर्त होगी !

प्रताप : बोलो, मैं मानने को तैयार हूँ।

कमला : अपने साथ नरेश को भी ले जाओ, और रात के दस बजे तक लौट आओ। रात को बरेली में नहीं बसोगे, कान्ती को गाड़ी में बिठाकर अपने घर लौट आओगे।

प्रताप : यही शर्त है ? यह भी कोई शर्त है। यह तो मैं करता ही, करूँगा ही। मैं तो सोचता था, सच कोई शर्त होगी।

कमला : मेरी तो यही शर्त है !···यह शर्त है, लेकिन इसे मजाक न समझना ! मैं तीन बार कहे देती हूँ, इस शर्त को भूलना नहीं, यह शर्त है, मजाक नहीं।

प्रताप : बिलकुल नहीं। भूलूँगा क्यों ? मैं इसको कबूल करता हूँ।

[मद्धिम संगीत द्वारा समय-परिवर्तन। पृष्ठभूमि में रात के साढ़े दस बजते हैं। दूर, स्टेशन से गाड़ी की तेज सीटियाँ सुनाई पड़ती हैं।]

कमला : (जिज्ञासा से) आ गए नरेश ! नरेश आ गए ? मास्टर साहब कहाँ हैं ? बोलता क्यों नहीं। कुछ जवाब तो दे ?

नरेश : उनकी गाड़ी छूट गयी। नहीं आ सके। मैं अकेले आया हूँ।

कमला : (ठण्डे स्वर से) नहीं आ सके ! नहीं आ सके ! तू अकेला आया !

नरेश : गाड़ी पकड़ने के लिए वे बहुत तेज दौड़े, पर गाड़ी न पकड़ सके। गाड़ी छूट गयी।

कमला : (क्रोध से चीखकर) झूठ मत बोल ! किसने तुझे कहा है झूठ बोलने के लिए ···ऐसे गाड़ी नहीं छूटती।

गोली : कान्तीजी को तो गाड़ी मिल गयी ? कि उनकी भी छूट गयी ?

नरेश : उन्हें मिल गयी। वह तो गयीं।

कमला : यह भी झूठ है ! (ठण्डे स्वर से) सब झूठ ! सब झूठ ! ऐसा कहीं नहीं होता। जो सच है, वही होता है।

[फफककर रोने लगती है। दो क्षण तक शान्त पृष्ठभूमि से कमला की सिसकियाँ उभरती रहती हैं।]

कमला : (रुँधे कण्ठ से) गोली ! ओ गोली ! !

गोली : क्या है बहू ?

कमला : पप्पू को मेरे पास सुला दो । (रुककर) आओ मेरे पप्पू ! जाओ, तुम लोग सो जाओ । घर की सब बत्तियाँ बुझा दो, गोली ! खड़ा क्या है, जा यहाँ से ! मैं कहती हूँ, जा !

[क्षणिक अन्तराल ।]

पप्पू : रो क्यों रही हो माँ ?

कमला : मुझसे लिपटे रहो बेटे ! अपने हाथों से मेरे गले को बाँधे रहो । हाँ, इसी तरह । सो जाओ ऐसे ! (रुककर) बेटे, तुम नाना के यहाँ चले जाना । वहाँ नानी और मामा हैं न ! वहाँ अब रहना !

पप्पू : तुम भी चलोगी न ?

कमला : मैं नहीं, तुम्हीं अकेले जाना । या नाना को चिट्ठी लिख देना, वह आकर तुम्हें ले जाएँगे । वहीं पढ़ना । रोना नहीं मेरे लिए, समझे न !

पप्पू : तुम कहाँ जा रही हो ?

कमला : मैं···मैं···बेटे ! (गला रुँध जाता है) बेटे मैं ! मैं पप्पू···मैं तेरे लिए साइकिल ले आने जा रही हूँ । रोना नहीं, साइकिल ले आने के लिए बहुत दूर जाना पड़ता है, बहुत दूर; वहीं जाऊँगी ।

पप्पू : तुम थकोगी नहीं ? कैसे जाओगी !

कमला : अब सो जाओ । इसी तरह सो जाओ !

पप्पू : आज ऐसे क्यों सुला रही हो ? क्या हो रहा है माँ तुझे ? ऐसे क्यों रो रही हो ?

कमला : (बनावटी हँसी) कहाँ रो रही हूँ रे ! तू बड़ा शरारती है । (रुककर) नाना के यहाँ शरारत न करना !

पप्पू : मुझे साइकिल नहीं चाहिए माँ ! मुझे छोड़कर तुम मत जाओ । मुझे साइकिल नहीं चाहिए । मैं रोज पैदल स्कूल जाया करूँगा ।

कमला : नहीं राजा बेटे, रूठो नहीं । कान्ती का भाई नरेश साइकिल पर जाए, तुम क्यों न साइकिल पर जाओ । जरूर जाओ पप्पू !

पप्पू : लेकिन माताजी, साइकिल लेने तुम मत जाओ । पापा से कह दो न, वही ला देंगे । नरेश को भी तो वही लाए थे ।

कमला : सो जाओ, बोलो नहीं बेटे । नरेश के लिए वह लाए थे, तुम्हारे लिए मैं लाऊँगी । सो जाओ !

पप्पू : तुम भी सो जाओ न माँ ।

कमला : पहले तुम सो जाओ बेटे । सो जाओ···सो जाओ ! एक चिड़ा था, एक चिड़िया थी । दोनों बहुत अच्छे थे । चिड़िया ने दो अण्डे दिए, बहुत हरे-हरे रंग के थे । एक रात जंगल में आँधी आयी । चिड़िया मर गयी, लेकिन उसने घोंसले से अण्डे न गिरने दिए । चिड़ा बहुत रोया । दूसरी चिड़िया आयी । दूसरी चिड़िया ने अण्डे को

देखकर चिड़े से कहा, मैं इन्हें गिरा दूँगी। (रुक जाती है)···सो गया मेरा पप्पू। आह, सो गया मेरा लाल ! सो गया, जाओ ! सो जाओ।

[समय-सूचक वाद्यध्वनि। जहाँ ध्वनि समाप्त होती है वहाँ से कमला के निःश्वास उभरते हैं।]

अब सुबह हो गयी। समय हो गया, सुबह हो गयी।···पप्पू ! पप्पू !···मेरी माँ···माँ···पप्पू···मेरे राम। आह, आह मेरे राम !

[आग में जलती हुई कमला की चीख खिंच उठती है। सारा वातावरण मौत की करुणा से भर जाता है। उसके बीच में दौड़कर आते हुए प्रताप की आवाज उभरती है, "कमला ! कमला !! आह आह ! यह तूने क्या कर लिया, क्या कर लिया कमला ? कमला ! आह !" धीरे-धीरे चीख-पुकार की आवाज खत्म हो जाती है। क्षणिक अन्तराल के बाद हलके उदास संगीत द्वारा क्रम-परिवर्तन।]

प्रताप : (घबराए स्वर से) माँ ! मैं अपनी आँखों के सामने आज भी देखता हूँ, वह कैसी जली। उसे मैंने जलाया माँ। उस शर्त ने ! मैं उस रात को न लौट सका। सुबह लौटा, जब उसने आग लगा ली थी।

माँ : यह क्या बक रहा है तू ! सब झूठ है। तेरा कोई कसूर नहीं है। वह स्टोव से जली। उसने खुद बयान दिया।

प्रताप : यह दुनिया के लिए है, दुनिया को धोखा है। लेकिन सत्य को तो मैं जानता हूँ। उसके न्याय में मेरा गला रुँधा है। माँ, गोली को बुला, नरेश को उठा। पप्पू को जगा। रात बीत चुकी है।

माँ : क्या करेगा तू ? क्या चाहता है ?

प्रताप : मैं तेरे पैर पड़ता हूँ माँ ! मेरी मान, अगर तू मुझे जिन्दा रखना चाहती है तो एक काम कर।

माँ : क्या ? क्या है ? क्या काम है, बता तो !

प्रताप : (गम्भीरता से) तुम, गोली, नरेश और पप्पू, सब सड़कों पर जाओ और नारे लगा-लगाकर सारी दुनिया से कहो कि प्रताप ने कमला को आग लगायी है। प्रताप ने उसे जलाया है। प्रताप हत्यारा है, खूनी है।

माँ : (घबराकर) गोली ! गोली !! दौड़ यहाँ !

गोली : (दौड़कर आता हुआ) क्या है माँ ?

माँ : सँभाल प्रताप को। मैं कोई डॉक्टर बुलाने जा रही हूँ, नहीं तो यह पागल हो जाएगा।

प्रताप : मैं पागल हो जाऊँगा ? नहीं, कभी नहीं। कितना अच्छा होता अगर मैं पागल हो जाता। लेकिन सत्य मुझे नहीं होने देता। कहीं न जाओ माँ ! कहीं न जाओ माँ ! यहीं रहो !

माँ : मेरी कसम, लेकिन तुम बोलो नहीं, चुप हो जाओ।

प्रताप : मैं चुप हो जाता हूँ माँ ! सच कह रहा हूँ । प्रताप बनकर सोचो, मेरी माँ बनकर नहीं । जब मैं चुप हो जाता हूँ, तो झट सामने कमला आ खड़ी होती है । यहाँ दीवार से सिर टेककर खड़ी हो जाती है । गोली, छुओ यहाँ···यहाँ छुओ । देखो कितनी ठण्डी है यहाँ की दीवार । कितनी ठण्डी, बर्फ-जैसी ।

[बाहर दरवाजे पर कोई खटखटाता है ।]

माँ : देखो, कौन आया ?

गोली : कान्तीजी आई होंगी । मुझे मालूम है, कान्तीजी होंगी ।

प्रताप : (घबराकर) कान्ती ! नहीं, मत दरवाजा खोलो । भीतर से कह दो, वह भाग जाए यहाँ से । मेरे सामने न आए ।

माँ : क्या कहता है ? पागल तो नहीं हो गया ? कान्ती के लिए तू ऐसा कहता है ? (रुककर) गोली, जा तू, दरवाजा खोल दे ।···प्रताप, अब ठीक से सो जा । उसके सामने न कुछ बकने लगना । कायदे से सो जा । हाँ, इसी तरह सिर ढँक ले !

कान्ती : नमस्ते माताजी !···नमस्ते !

माँ : आओ कान्ती ! आओ, यहाँ बैठो !

कान्ती : सो रहे हैं प्रताप बाबू ?

माँ : हाँ, बहुत सिर-दर्द रहा है इसे रात-भर । मैं भी परेशान रही । क्या करूँ, कुछ समझ में नहीं आता ।

कान्ती : मैं तो यहाँ शाम को ही आई थी, जब बारिश हो रही थी ।

माँ : सच !

कान्ती : इस बदमाश गोली से पूछिए । इसने दरवाजा खोला और मुझे देखते ही झट बन्द कर लिया ।

माँ : क्यों रे गोली ?

कान्ती : यही नहीं, इसने दुत्कार कर कहा, तुम भीतर नहीं आ सकती, सुबह आना । मैं बारिश में लौटकर फिर स्टेशन चली गई ।

माँ : (गुस्से से) तेरी यह हिम्मत गोली ! क्या हो गया था तुझे ? जानता भी है तू कान्ती को ?

गोली : मैं इन्हें जानता हूँ माताजी ।

माँ : फिर ?

गोली : कुछ नहीं । मालिक उठें, तो अभी मैं उनसे जवाब लेकर चला जाऊँगा । मुझे नहीं रहना है यहाँ ।

माँ : भाग यहाँ से, जा जल्दी चाय बनाकर ला । (कान्ती से) पुराना नौकर है । पर समझ-बूझ से काम नहीं लेता ।

कान्ती : तो इन्हें सिर-दर्द रहा है ?

माँ : हाँ, बहुत बेचैनी थी ।

कान्ती : मैं इस बार कॉलेज से पूरे दो महीने की छुट्टी लेकर आई हूँ ।

माँ : अच्छा किया। तुम्हें ही तो मेरे प्रताप को सँभालना है। इस बिगड़ी गृहस्थी को बनाना होगा।

[एकाएक प्रताप भयानक ढंग से हँसने लगता है, सब घबरा जाते हैं।]

कान्ती : ऐसे क्यों हँस रहे हो ? ऐसे नहीं हँसते।

माँ : जानती नहीं, तुम्हें हँसाने के लिए हँस रहा है ! इसकी आदत जो है।

प्रताप : ठीक कहती है माँ, तू बड़ी होशियार है। बहुत बड़ा दिल है तेरा। खूब कहती है तू ! (**हँसने लगता है। फिर कान्ती से**) शाम को तुम आई थीं ? अच्छा किया गोली ने ! (**पुकारकर**) गोली, सुनो गोली !

गोली : क्या है मालिक ?

प्रताप : सामने दीवार से इन्हें खड़ी करो ! खड़ी हो जाओ, कान्ती ! उठो, मुझे देखो नहीं। चुपचाप जाकर खड़ी हो जाओ !

कान्ती : (**घबराहट से**) क्या हो गया है आपको ?

प्रताप : तुम्हें मालूम है ! पहले खड़ी हो जाओ ! चलो !

माँ : खड़ी हो जाओ न ! मजाक तो कर रहा है प्रताप। हँसी की आदत नहीं गई इसकी। कितना नटखट है !

प्रताप : यहाँ नहीं; उधर खड़ी हो···यहाँ की दीवार से नहीं। यहाँ नहीं, यहाँ तुम्हारे शरीर की छाया तक नहीं पड़ सकती।

कान्ती : (**रुँधे कण्ठ से**) माताजी ! इन्हें सँभालिए। क्या हो गया है इन्हें ? यह सब क्या है ? मुझे डर लग रहा है।

प्रताप : मुझे कुछ नहीं हुआ है। इसी तरह चुपचाप खड़ी रहो। (**रुककर**) यहाँ की दीवार कितनी ठण्डी है ! (**रुककर**) और यहाँ की ? सिर उठाओ ! ओह ! कितनी गरम है यहाँ की दीवार। (**रुककर**) अब तुम सीधी चली जाओ यहाँ से। चली जाओ। चली जाओ !!

माँ : (**घबराकर**) क्या कर रहा है तू ?

प्रताप : (**क्रोध से**) चुप रहो माँ। नहीं तो इस ठण्डी छाया के साथ तुझे भी यहाँ से निकाल दूँगा। (**रुककर**) यह ठण्डी छाया सबकी गरमी अपने में खींचती चलती है। आज इसकी सारी गरमी मैंने इस दीवार में बन्द कर ली। (**हँसता है**) तुम ? (**फिर कड़े स्वर से**) गोली ! इन्हें तू दरवाजे से··· (**कान्ती के सिसकने की आवाज उभरती रहती है**) बाहर कर दे ! जाओ ! निकल जाओ यहाँ से।

[प्रताप की भयानक हँसी खिंच जाती है, जहाँ खत्म होती है, वहाँ एक क्षण के लिए करुण संगीत उभरकर बीच ही में एकाएक टूट जाता है।]

[परदा]

मोहिनी-कथा

पात्र

गंगादास
मोहिनी
महेन्द्र
कपूरदास
सीता

[गंगादास के बँगले का बरामदा। सामने से दायीं ओर अभिनेता के भीतर जाने का दरवाजा। दायीं और बायीं ओर क्रमशः दो दरवाजे। बायीं ओर का दरवाजा खुला है और दायीं ओर का पूर्णतः बन्द है, किन्तु उत्तम महँगे परदे सब पर झूल रहे हैं। बीचोबीच एक नीची टेबल को घेरे हुए तीन खूबसूरत कुरसियाँ और दो मोढ़े रखे हैं। इधर-उधर फूल-पौधों से हरे-भरे गमले रखे हैं।

सुबह के साढ़े आठ बज रहे हैं। परदा उठते ही दृश्य में, श्री गंगादास कुरसी पर बैठे अखबार पढ़ रहे हैं। अवस्था अभी पचास से अधिक नहीं लगती। चश्मा लगाए हैं। धोती पर बन्द गले का कोट पहने हैं। भीतर से कपूरदास का प्रवेश। अवस्था पैंतीस वर्ष। सूट पहने हुए, आकर्षक व्यक्तित्व।]

गंगादास : बेटे, यह अखबार में अपने 'इंगेजमेंट' की खबर तुमने छपाई है ?

कपूर : क्यों, छप गई है क्या ? ओहो···! **(अखबार लेकर देखते हुए।)**

गंगादास : सीता के फादर तैयार हो गए ? **(रुककर)** उन्होंने इसके लिए आज्ञा दे दी ?

कपूर : **(अखबार रखते हुए)** जी हाँ। बल्कि अखबार में यह न्यूज उन्होंने ही दिलाई है।

गंगादास : ठीक ! समझ गया। **(उठते हुए)** तो मेरे इकलौते बेटे श्री कपूरदास एम०, कॉम०, मैनेजिंग डाइरेक्टर, 'त्रिवेनी इलेक्ट्रिकल कॉरपोरेशन प्राइवेट लिमिटेड' लखनऊ की दूसरी शादी भी आज से सातवें दिन हो जाएगी। **(हँसते हैं।)**

कपूर : पर आप इस तरह हँस क्यों रहे हैं पिताजी ? प्लीज पापाजी···सुनिए न ! बताइए !

गंगादास : सुनो। तुम मुझे बताओ, मुझे हँसना चाहिए या रोना ? सच, मैं क्या करूँ ! **(रुककर)** देखो; दिल्ली से मोहिनी का यह तार मुझे आज ही सुबह छह बजे के करीब मिला है।

कपूर : क्या लिखा है ?

गंगादास : वह यहाँ आ रही है।

कपूर : असम्भव ! झूठ है यह तार ! वह यहाँ क्यों आएगी ! **(रुककर)** और अब यहाँ उसके आने से भी क्या लाभ होगा ?

गंगादास : पता नहीं ! सिर्फ इतना ही लिखा है कि वह यहाँ आ रही है—न दिन, न तारीख, न ट्रेन, न समय···। **(रुककर)** क्यों, तुमने उसे अपनी इस शादी के विषय में लिख दिया था ?

कपूर : जी हाँ। और क्या करता ?

[गंगादास चुप हैं।]

कपूर : मोहिनी की यही इच्छा थी कि वह मुझसे अब सदा अलग रहे। उसने मुझे जब साफ लिख दिया कि मैं तुमसे 'डाइवोर्स' चाहती हूँ, तो मुझे यह रास्ता ढूंढ़ना पड़ा। (रुककर) यह उसी की इच्छा थी। यह उनका आखिरी खत था।

गंगादास : ऐसा आखिरी खत उसी बहू ने लिखा···।

कपूर : जी हाँ, आपकी उसी बहू ने जो एक दिन पूरे अग्रवाल समाज में आपके लिए आदर्श थी ! वही मोहिनी···।

गंगादास : आदर्श तुम भी थे मेरे लिए और अब भी हो···।

कपूर : इस तरह वह भी आपके लिए आदर्श थी और अब भी है।

गंगादास : मुझे तर्क से मत पकड़ो बेटे ! मैं कभी कॉमर्स या लॉ अथवा मैथमेटिक्स का विद्यार्थी नहीं था। मैंने जीवन-भर इतिहास पढ़ा है और पढ़ाया है। वह भी मैं तुम्हारे लिए कभी प्रोफेसर श्री गंगादास नहीं था। वह मैं शेष युनिवर्सिटी के विद्यार्थियों के लिए था।

कपूर : पर आज यह सब बातें आप क्यों कह रहे हैं पिताजी ? मैं आपको जानता नहीं क्या ?

गंगादास : जानते क्यों नहीं ! तुम मुझे जरूर जानते हो ! पर तुम अपने को नहीं जानते जैसे कि मैं तुम्हें जानता हूँ, पर अपने को नहीं जानता ! यही जो नहीं जाना जा सकता, यही मनुष्य का इतिहास बनता है।

कपूर : (बाहर बढ़ते हुए) पता नहीं पिताजी !

गंगादास : रुको ! कहीं जाने की जल्दी में हो क्या ?

कपूर : जी हाँ ! सीता को संग लेकर जरा एक फोटो खिंचाने जाना है। बस हजरतगंज तक।

[गंगादास हँस पड़ते हैं।]

गंगादास : माफ करना बेटे ! मुझे इतिहास की गति पर हँसी आ रही है। हिस्ट्री रिपीट्स इटसेल्फ़ ! (हँसते हैं।)

[कपूर जाने लगता है।]

गंगादास : रुको, रुको ! इस तरह नाराज होकर फोटो खिंचाने मत जाओ। आओ, बैठो इधर ! कथा सुनो ! घर टूटने का इतिहास अब मेरे दिमाग में साफ दिख रहा है। काश, आज तुम्हारी माँ भी जीवित होती ! मैं उसे भी समझा पाता !

कपूर : सीता इन्तजार करेगी वहाँ !

गंगादास : इन्तजार करने दो उसे ! स्त्री को इन्तजार करना ही चाहिए, तभी वह अपने पुरुष का महत्त्व समझती है। बैठो तुम। सबक सीखो कुछ भले आदमी !

इतने बड़े 'कंसर्न' को इतनी सफलता से चलाते हो, पर एक स्त्री तुम लोगों से नहीं चलती ! नादान···!

[कपूर कुरसी पर बैठता है। गंगादास बायें कमरे में जाते हैं।]

गंगादास : (आवाज आती है) ड्राइवर ! देखो, 'कार' लेकर सीता बेटी के बँगले पर जाओ और उसे यहीं ले आओ। जाओ···।

[गंगादास का प्रवेश]

गंगादास : देखो बेटे ! मोहिनी जब दस साल की थी, तब से मैं उसे जानता हूँ। उसके पिता गोपाल मित्तल मेरे खूब परिचितों में थे। मैं यहाँ युनिवर्सिटी लेक्चरर था और वह तब यहाँ असिस्टेण्ट इंजीनियर थे। मोहिनी बेटी को मैंने तब से देखा। वह तब सिक्स क्लास में पढ़ रही थी—बेहद लज्जाशील—समझो जैसे लाजवन्ती का कोई नन्हा-सा पौधा हो ! (रुककर) किसी बाहरी आदमी से बोलती नहीं थी। बस, किसी दैवी मूर्ति की तरह आँखें नीची किए हुए मुसकराती रहती थी और तब उसके मुँह से जैसे लाली बरसी पड़ती थी। (रुककर) तुम सब हाई-स्कूल का इम्तहान देने जा रहे थे। वह अपने बाप की इकलौती बेटी और तुम मेरे इकलौते बेटे। अपने मन में तुम्हारी शादी मैंने तभी उस अजब पावन लज्जाशील, उषा की पहली लाली-जैसी मोहिनी के साथ कर दी थी।

कपूर : पिताजी··· !

गंगादास : हाँ, आज मैं कवि हो रहा हूँ, यही कहने जा रहे थे न तुम !

कपूर : नहीं, मैं यह कहता हूँ कि अब इन बातों से क्या फायदा ?

गंगादास : नुकसान-फायदा जानने वाले हम-तुम नहीं हैं। और न इस तराजू पर जीवन का यह इतिहास जो आज कथा-जैसा लग रहा है—तौला ही जा सकता है। (रुककर भाव बोलते हुए) हाँ तो हुआ यह (रुककर) माफ करना बेटा, आज मुझे सारी बातें सीधी-सी कथा बनकर याद आ रही हैं—जैसे वह सब एक बड़ा-सा दर्पण हो जिसमें हम सबकी सूरतें—विशेषकर मेरी, तुम्हारी और मोहिनी की और उस दिल्ली की जिन्दगी की—सब साफ उभरकर आ रही हों !

कपूर : मुझे देरी हो रही है पिताजी। मैं समझता हूँ आप यही कथा बनाकर कहना चाहते होंगे कि वह सुशील लज्जामयी आदर्श कन्या मोहिनी जब अपने पिता के साथ दिल्ली में जा बसी तो उसमें परिवर्तन आ गया। और वह पत्नी के गुणों से अलग हो गई।

गंगादास : देखो, अपनी तरफ से इस तरह सत्य को मत मोड़ो। तुम्हें जल्दी है, तो तुम जा सकते हो। (रुककर) दिल्ली में मोहिनी यदि बदल गई होती, तो मैं फिर उससे तुम्हारी शादी ही क्यों करता ? वह ब्याह तक उसी तरह थी—नेक सीधी शरीफ ! मोहिनी नारीमयी !

कपूर : (सहसा मुसकराकर) नेक सीधी शरीफ !···मोहिनी !! उसे आप सिर्फ मायाविनी क्यों नहीं कहते ?

गंगादास : सुनो ! सुनो !! बारह वर्ष से बीस वर्ष—दिल्ली में मोहिनी के वे आठ वर्ष —फिर बीस वर्ष की अवस्था में तुम्हारी उससे दिल्ली में शादी हुई !

कपूर : पिताजी, आप खामखाह इन बीती बातों को क्यों याद कर रहे हैं ? यदि कुछ याद करना है तो सिर्फ इतना ही याद रखने लायक है कि वह दुलहिन मोहिनी ब्याह के बाद दिल्ली छोड़कर यहाँ लखनऊ अपने इस घर में न बस सकी !

गंगादास : मैं तुमसे पूछता हूँ, वह यहाँ क्यों आकर बसती ? अपने इतने स्नेही माँ-बाप, घर और सुविधाओं को छोड़कर यहाँ क्यों आतीं ? उसे तो पता ही न चला कि पति का घर क्या होता है ? ससुराल क्या है ? लड़की की यह ब्याहता जिन्दगी क्या है, तुमने उसे जानने का अवसर ही न दिया ! तुमने उसे संस्कार-च्युत किया। मोहिनी कोई साधारण लड़की नहीं थी जिसे तुमने केवल अपनी वासना में—वह भी उसी की दिल्ली में—बाँधना चाहा था। पत्नी केवल 'सेक्स' नहीं है !

कपूर : फिर यह असाधारण शादी क्यों कराई आपने ?

गंगादास : शादी में कोई दोष नहीं था। दोष तुममें था, दोष मुझमें था···।

कपूर : और दिल्ली की वह जादू-भरी जिन्दगी ! वह मिराण्डा कॉलेज ! वह ब्यूटी कॉम्पिटीशन में उसका सदा फर्स्ट आना। रंग-बिरंगी सहेलियाँ ! नाच-गाने ! कॉलेज टुअर्स और पिकनिक ! लड़कियों में 'क्वीन' बनकर वह मस्त घूमना ! यह थी तब वह लाजवन्ती ! यह था उस मोहिनी का कुमारी रूप !

गंगादास : पर इसी में तो तुम ब्याह के बाद पागल हो गए। मोहिनी के इन्हीं रूपों की तुमने उपासना की ! तुमने उसे इन रूपों से कभी ऊपर उठने ही न दिया। मनुष्य केवल भूख नहीं है। जैसे तितली केवल पंख नहीं है। तुमने जो चाहा, मोहिनी ने तुम्हें वही दिया। और मोहिनी ने जो चाहा तुमने भी उसे वही दिया ! इसमें विवाह कहाँ आता है ? धर्म और आदर्श कहाँ हैं इसमें ? (रुककर) तुमने उसे इतना अन्ध-समर्पण दिया कि सब कुरूप हो गया !

कपूर : आपका खयाल गलत है। जो सुन्दर है वह कभी कुरूप नहीं हो सकता !

[भावना से अभिभूत होकर चुप रह जाता है, फिर तेजी से मुड़कर भीतर दौड़ता है।]

गंगादास : (दायीं ओर मुड़कर) दर्शन ! ओ दर्शन !

[भीतर से आवाज आती है : 'जी सरकार !']

गंगादास : जरा डॉक्टर चक को टेलीफोन कर देना कि मैं दस-पन्द्रह मिनिट बाद यहाँ से सीधे आँखों के अस्पताल पहुँच जाऊँगा। कहना, वह घर पर मेरा इन्तजार न करें।

[भीतर से आवाज—'अच्छा हुजूर !' भीतर से खतों का ढेर लिए कपूर का प्रवेश।]

कपूर : ये हैं उस मोहिनी के प्रेम-पत्र ! इन्हें पढ़कर इस दुनिया में कोई भी यह नहीं सोच

सकता कि उससे मेरा ऐसा अलगाव भी हो सकता है। मैं कैसे जानूं कि इसमें क्या छिपा है !

गंगादास : क्यों नहीं ! इस अलगाव को कोई भी विवेकवान् बहुत पहले सोच सकता था ! (रुककर) इन प्रेम-पत्रों में तब तुमने प्रेम कहाँ देखा ? इनमें तुमने महज वासना का अर्थ लिया। और वासना का परिणाम यही होता है ? मृत्यु या अलगाव !

कपूर : तो आप इस परिणाम को जानते थे ?

[गंगादास चुप हैं।]

कपूर : फिर आपने मुझे रोका क्यों नहीं ? आपने मुझे चेतावनी क्यों नहीं दी ? बोलिए, क्या आप यह चाहते थे कि मैं और मोहिनी इस तरह एक दिन ऐसे परिणाम पर पहुँच जाएँ।

गंगादास : कपूर ! (रुककर) मुझे ऐसे जीवन का कोई अनुभव नहीं था। और न मुझमें तब इतना विवेक ही था ! क्योंकि मैं तुम दोनों पर विश्वास करता था। आशा थी मुझे··· (रुककर) अब इस नये दुःख ने मुझे एक नया विवेक दिया। तभी मैं बिना किसी पछतावे के साफ देख रहा हूँ और आज तुमसे पहले अपने दोष को स्वीकार करता हूँ कि मैंने खुद तुम्हें जितने प्रेम से पाला उतना विवेक से नहीं। और तुम्हारे चरित्र-स्वभाव पर यह दोष दुगुना हो गया। तुमने मोहिनी को जैसा भी हो सिर्फ प्रेम दिया, उसे अपना केवल प्रेम-व्यवहार दिया, उसे तुमने विवेक न दिया। न तुमने उसके साथ विवेक से कर्म किया।

कपूर : आखिर मैं क्या करता पिताजी ? उसके इतने सहज प्रेमिका उत्तर प्रेम ही हो सकता था !

गंगादास : यह सत्य केवल प्रेमी-प्रेमिका के लिए है—पति और पत्नी के लिए नहीं। (सोचकर) मोहिनी एक अनुराग-लता थी जिसे तुमने दिल्ली में उसके पिता के उन्मुक्त घर में स्वच्छन्द छोड़ दिया। उस अनुराग-लता को लखनऊ के इस घर में तुम नहीं ला सके। उस मोहिनी लता को तुम्हें पहले घर देना चाहिए था। तुमने उसे घर की रक्षा नहीं दी। फल यह हुआ कि अनुराग-लता को दिल्ली के खुले मैदान में भेड़-बकरियाँ चर गयीं। सोचो, स्वीकार करो इसे ! आज इस तेजी से बदलते हुए नये समाज का यह नया दुःख है।

कपूर : मैं क्या करता ! विवाह के बाद मोहिनी को यह लखनऊ का घर अच्छा नहीं लगा। वह यहाँ आना पसन्द नहीं करती थी ! वह केवल दिल्ली में ही रहना चाहती थी। यह घर ! यह शहर !! यहाँ के लोग···!!

गंगादास : क्यों पसन्द करती वह ? आखिर क्यों ? किसलिए ? जब तुम खुद उसके अन्ध-प्रेम में दिल्ली में ही अपना बसेरा डाले रहते थे ? फिर वह किस आकर्षण से अपनी दिल्ली की रंगीन जिन्दगी छोड़कर यहाँ आती ? मैं पूछता हूँ किस आकर्षण से दुलहिन अपने माँ-बाप, सखी-सहेली, घर-परिवार को छोड़कर पति के नये घर

में आती है ? (**रुककर**) वह अजब आकर्षण दाम्पत्य-सुख का होता है। और जब यह सुख उसे अपने मायके में ही सहज प्राप्त हो जाए, तो वह दुलहिन कभी भी ससुराल नहीं आ सकती ! तब उसके सास-ससुर कभी भी पसन्द नहीं आ सकते ! अपने के सिवा उसे कुछ भी पसन्द नहीं आ सकता ! और एक दिन वह अकेला पति भी उसे नापसन्द हो जाएगा। वह अनजान में ही उस पति से अलग होना चाहेगी। खैर !···अब से शिक्षा लो बेटे ! अनुराग-लता को भेड़-बकरियों से रक्षा के लिए विवेक और मर्यादा की चहारदीवारी चाहिए। पत्नी को पति का घर चाहिए। नहीं तो पत्नी, पति के लिए केवल 'पार्ट टाइम वाइफ' बन के रह जाती है। 'ऐण्ड द मैन मस्ट हैव फुल टाइम वाइफ !' पूरी पत्नी ! अधूरी नहीं।

[खिलखिलाकर हँस पड़ते हैं। कपूर पत्रों की ढेरी पर गुस्से से हाथ मारकर उसे बिखेर देता है।]

कपूर : बन्द कीजिए अपनी हँसी पिताजी !

गंगादास : नाराज हो गए बेटे ! यह मैं सिर्फ तुम पर नहीं हँस रहा हूँ, अपने पर भी हँस रहा हूँ। (**खत बटोरते हुए**) इन निर्दोष पत्रों ने क्या बिगाड़ा है ! ये तो बेचारे पवित्र क्षणों के प्रतीक हैं। (**देते हुए**) लो, रखो इन्हें। ये तुम्हें अब नया अर्थ देंगे —अपना असली अर्थ !

[सहसा बाहर से कोई प्रभावशाली पुरुष आता है—बहुत ही 'टिपटॉप' सूट में। आँखों पर काला चश्मा, कन्धे पर कैमरा, हाथ में थर्मस।

कपूर : कौन ?···आपकी तारीफ ?

पुरुष : मिस्टर महेन्द्र···फ्रेण्ड ऑव मोहिनी दास, न्यू डेलही।

कपूर : (**हाथ बढ़ाते हुए**) ओह, आ' एम कपूर !

महेन्द्र : (**बहुत ही प्रसन्न**) गुड लक् ! (**हाथ झकझोरते हुए**) हाउ डू यू डू !

कपूर : माई फादर···!

महेन्द्र : प्रोफेसर गंगादास ! नमस्ते···!

गंगादास : नमस्ते। तशरीफ रखिए ! कैसे तकलीफ की आपने ?

[कपूर खड़ा है। पिताजी और महेन्द्र बैठते हैं।]

कपूर : चलिए, आइए, ड्राइंग रूम में बैठें !

महेन्द्र : नहीं जी, हम बिलकुल ठीक हैं ! संग मोहिनी भी आयी है !

गंगादास : (**आह्लाद से उठकर**) बहू आयी है ! 'रियली' ?

[कपूर चिट्ठियों को लिए हुए तेजी से अन्दर जाता है।]

महेन्द्र : जी हाँ, बाहर सड़क पर कार में बैठी हैं।

गंगादास : (**बढ़ते हुए**) अब तक बाहर सड़क पर ? ऐसी भी क्या बात ! (**जाते हुए**) बहू···! बहू !!

कपूर : (भीतर से निकलते हुए) कैसी बहू ! आप क्यों दौड़े जा रहे हैं ? यदि उन्हें यहाँ आना है, तो वह खुद यहाँ आएँगी। और उन्हें आना चाहिए—सच है, जो गलती मैंने जिन्दगी-भर की, उसकी जड़ सचमुच आप हैं ! अनुराग में विवेक, अभी आप मुझसे क्या कह रहे थे ?

[पिता और पुत्र एक-दूसरे की आँखों में निहारते रह जाते हैं। इसी बीच बाहर से मोहिनी का प्रवेश। सचमुच मोहिनी ! अवस्था तीस वर्ष से अधिक नहीं। सुन्दर युवती और उस पर अत्यन्त सुरुचिपूर्ण वस्त्रविन्यास। गम्भीर आँखें।]

मोहिनी : क्षमा कीजिए···नमस्ते !

[मोहिनी का यह करबद्ध प्रणाम पहले पिता की ओर उठता है, फिर कपूर की ओर जाकर जैसे एक क्षण के लिए वैसे का वैसे ही स्वप्नवत् खिंचा ही रह जाता है। कपूर की आँखें झुक जाती हैं, फिर मोहिनी गंगादास को नमस्ते करती है।]

गंगादास : (भरी आँखों और कण्ठ से) प्रसन्न रहो बेटी ! बड़ी कृपा की ! बैठो ! नहीं-नहीं आओ, घर में चलकर बैठो। (**पुकारते हुए**) वसन्त !···दर्शन ! ओ वसन्त !

[कपूर अन्दर चला जाता है। मोहिनी कुरसी थामे खड़ी रह जाती है।]

गंगादास : आओ, अन्दर चलें बेटी !

मोहिनी : नहीं पिताजी, यहीं बाहर ही ठीक है।

गंगादास : जैसी तुम्हारी मर्जी बेटी।

[मोहिनी को अपने पास की कुर्सी पर बैठाते हैं।]

मोहिनी : पिताजी, मुझे बहुत जल्दी है। मैं दिल्ली से यहाँ सिर्फ···।

[आगे जैसे बोल नहीं पाती।]

गंगादास : ओहो ! आज सबको जल्दी है ! सबको जैसे कहीं न कहीं जाना है। मुझे हॉस्पिटल जाना था—डाक्टर चक को अपनी आंख दिखाने। कपूर को फोटो खिंचाने और तुम्हें बेटी ?···

मोहिनी : मुझे इसी साढ़े नौ बजे के प्लेन से दिल्ली वापस पहुँच जाना है। मैं अगले हफ्ते इंग्लैण्ड जा रही हूँ।

गंगादास : कैसे बेटी ?

मोहिनी : दिल्ली 'कॉन्वेण्ट टीचर्स' की एक पार्टी वहाँ 'स्टडी टूर' पर जा रही है—मैं उसी में हूँ।

गंगादास : ओहो ! तुमने 'कॉन्वेण्ट' में कब से टीचरी कर ली ?

मोहिनी : अब तो तीन साल हो गए।

गंगादास : ओहो ! मुझे तो कुछ भी पता नहीं। (**दुःख से**) पर पता कैसे होता, तुम सदा दिल्ली ही रहीं और मैं यहाँ···।

[उसी समय बाहर से सीता का प्रवेश—भरी-पूरी लड़की, खूब शृंगार किए हुए। सबको अचानक देखकर कुछ लजा जाती है।]

गंगादास : (उठकर) आओ बेटी ! यह है सीता···। इधर आओ बेटी, प्रणाम करो··· देखो, मोहिनी बेटी आयी हैं !

[मोहिनी बढ़कर सीता का प्रणाम लेती है।]

महेन्द्र : इन्हीं से मिस्टर कपूर का इंगेजमेण्ट हुआ है ? नमस्ते···। कांग्रेचुलेशन्स !

[मोहिनी सीता के हाथ पकड़े हुए सस्नेह उसे निहारती रह जाती है।]

सीता : आप बैठिए न ! अभी आयी हैं ?

मोहिनी : बिलकुल अभी। और अभी चली भी जाऊँगी।

सीता : (सस्नेह) आइए, अन्दर चलिए···आइए न ! प्लीज़···।

मोहिनी : बिलकुल ठीक हूँ यहाँ !

गंगादास : अन्दर जाओ न बेटी ! आखिर यह तुम्हारा ही घर··। (दुःख से) इस घर की तो इतनी किस्मत ही न थी। खैर···। (जल्दी से) सीता बेटी, पहले इनका कुछ आतिथ्य तो करो।

[सीता भीतर जाने लगती है, मोहिनी सस्नेह पकड़ लेती है।]

मोहिनी : नो थैंक्यू, प्लीज़ ! अभी-अभी नाश्ता करके हम लोग यहाँ आए हैं। बात यह है कि··· (रुक जाती है—भावनाओं में बँधकर।)

[सीता अन्दर चली जाती है।]

गंगादास : हाँ-हाँ, बोलो बेटी ! आज्ञा दो···।

मोहिनी : कैसे कहूँ मैं···।

['बैग' से एक कागज निकालकर हाथ में पकड़े रह जाती है।]

महेन्द्र : मिस्टर गंगादासजी, यह मिसेज मोहिनी दास के 'डाइवोर्स पेपर' हैं। इन्हें देख लीजिए।

[महेन्द्र मोहिनी के हाथ से 'पेपर्स' लेकर गंगादास को दे देता है। महेन्द्र सिगरेट जलाता है और लम्बे-लम्बे कश लेने लगता है। मोहिनी का सिर झुक गया है।]

गंगादास : (दुःख से) इस 'पेपर' की क्या जरूरत थी बेटी ?···यह 'स्टेटमेण्ट' किसका तैयार किया हुआ है ?

महेन्द्र : मेरे फादर का तैयार किया हुआ है। माई फादर इज एडवोकेट, डेलही।

गंगादास : मोहिनी बेटी के पिता की राय से यह 'स्टेटमेण्ट' तैयार किया गया है ?

महेन्द्र : जी हाँ, उन्हें भी दिखा लिया गया है।

गंगादास : ओह ! (पुकारते हुए) कपूर···कपूर बेटे !

[भीतर से आवाज—'आया पिताजी']

मोहिनी : लेकिन यह सब 'पेपर्स' उन्हें क्यों दिखाएगा ?

गंगादास : बेटी, भोक्ता तो वही है। हम सब तो इस करुण खेल के महज तमाशबीन हैं।

[भीतर से कपूर का प्रवेश, पीछे सीता है, हाथ में कॉफी की ट्रे लिए हुए, सामने टेबल पर कॉफी रखी जाती है। सीता मोढ़े पर बैठकर कॉफी बनाने लगती है।]

गंगादास : (**कागज देते हुए**) बेटे, ये कागज पढ़ लो।

[कपूर कागज पढ़ने लगता है। महेन्द्र कॉफी पीना शुरू कर देता है। मोहिनी निस्तेज बाहर शून्य में देख रही है। सामने प्याला रख हुआ है।]

गंगादास : (**सीता से**) थैंक्यू बेटी ! अब तुम अन्दर जाओ।

[उसी समय भीतर टेलीफोन की घंटी बजती है।]

गंगादास : देखो बेटी, किसका फोन है ? कॉफी पियो मोहिनी बेटी ! मेरी इच्छा है पियो···।

[सीता अन्दर जाती है। गंगादासजी भी कॉफी पीने लगे हैं। मोहिनी सिर्फ एक घूंट कॉफी पीकर रह जाती है, जैसे कहीं बहुत गहरे में डूबी हुई।]

सीता : (लौटकर) पिताजी, डॉक्टर चक का फोन है, आपको फौरन बुलाया है।

गंगादास : (**मोहिनी से**) मैं अभी आया बेटी। जरा आँख के डॉक्टर के पास जा रहा हूँ, रात को इन आँखों में बड़ी तकलीफ रहती है। (**उठकर जाते हुए**) अभी आया। जाना नहीं, हाँ !

[गंगादास का बाहर प्रस्थान। सीता अन्दर चली जाती है।]

कपूर : (**कागज पढ़कर**) इन बातों के लिखने की क्या जरूरत थी ? 'डाइवोर्स' के लिए इन भद्दे गलत कारणों को देना क्या उचित था ? मेरे माँ-बाप ने आपको बहुत तकलीफें दी हैं। यहाँ की घर-गृहस्थी आपको बीमार बना देती है। क्या यह सही है ?

महेन्द्र : और आप क्या समझते हैं ?

कपूर : प्लीज़, यू कीप क्वॉयट ! मोहिनीजी, मैं आपसे पूछ रहा हूँ, जो चार्जेज यहाँ लगाए गए हैं, वे क्या सच हैं ?

मोहिनी : नहीं। कभी नहीं।

महेन्द्र : फिर भी 'डाइवोर्स' के लिए कुछ कारण तो देना ही है।

कपूर : आप मुझसे 'डाइवोर्स' कर सकें इसके लिए तो मैंने खुद कारण पैदा कर लिया है। (**रुककर**) आपने नाहक इसके लिए मेरे निर्दोष पिता पर, मेरी दिवंगता माँ पर

—जो आपको इस घर में पाने के लिए तड़पकर मर गयी—कलंक लगाया। सारा कलंक आप मुझ पर लगातीं। यह है मेरा माथा। मैं सब कह सह लूंगा। आपने मुझे···।

मोहिनी : (सहसा) यह सब मेरा लिखा नहीं है, यह सब वकील की वकालत है।

कपूर : ठीक है। पर वकील की वकालत तो वहाँ लगती है, जहाँ कोई झगड़ा हो। यहाँ तो वैसा कुछ भी नहीं है। आपने अन्त में मुझे लिखा कि मैं 'डाइवोर्स' चाहती हूँ। 'सैपरेशन' पूरा हुआ। उसके बाद ही मैंने तुरन्त उसका अपनी ओर से कारण उपस्थित कर दिया। पति का दूसरी शादी कर लेना स्त्री के लिए 'डाइवोर्स' की सबसे सरल स्थिति है। (रुककर) मेरा सीता से 'इंगेजमेंट' हो गया—आप मुझे यूँ ही 'डाइवोर्स' दे सकती हैं। और 'डाइवोर्स' तो उसी दिन हो गया, जिस क्षण मैं आपके मन से हट गया। यह सारी कथा तो मन की है—इससे बाहर तो महज कागज का खेल-जैसा है।

मोहिनी : मुझे अगले सप्ताह इंग्लैंड जाना है।

कपूर : मुबारक हो ! आप जरूर जाइए।

महेन्द्र : और आपकी दूसरी शादी ? वह इसके पहले हो जानी चाहिए, ताकि 'डाइवोर्स' की कार्रवाई ठीक से पूरी हो जाए।

कपूर : आपकी तारीफ ? मैं पूछता हूँ आप कौन हैं ? मेरा मतलब इनसे आपका कोई रिश्ता है क्या ?

महेन्द्र : यही···बस यही···समझिए दिल्ली का रिश्ता।

कपूर : ओह ! दिल्ली का रिश्ता। पिताजी सच कह रहे थे।

महेन्द्र : क्या सच कह रहे थे ?

कपूर : कि मैंने···मैंने खुद इस··· (**संभलकर चुप रह जाता है**) 'आई हैड ए पार्ट टाइम वाइफ।'···दिल्ली का रिश्ता···! दिल्ली का रिश्ता !! दिल्ली !!! दिल्ली !!!! दिल्ली !!!! जैसे दिल्ली को छोड़कर अब हिन्दुस्तान में लखनऊ, इलाहाबाद, बनारस वगैरह हैं ही नहीं।

महेन्द्र : (उठकर) यह क्या अनाप-शनाप बातें कर रहे हैं आप ? आपका दिमाग तो नहीं खराब हो गया ?

मोहिनी : (जैसे चौंककर) महेन्द्र !···चुप रहो तुम।

कपूर : जी हाँ, मेरा नहीं तो और किसका दिमाग खराब होगा। खैर···छोड़ो। (रुककर) तो आपका इनसे दिल्ली का रिश्ता है ?

मोहिनी : (तड़पकर) मेरी इनसे शादी होने जा रही है।

कपूर : (और अधिक उद्दीप्त) यह झूठ है ! मैं जितना तुम्हें जानता हूँ वह खूब जानता हूँ—यह झूठ है।

महेन्द्र : क्यों, आप दूसरी शादी कर सकते हैं तो यह नहीं कर सकतीं क्या ? आपसे 'डाइवोर्स' होते ही हमारी शादी होगी।

कपूर : मगर तुमसे नहीं। आई नो मोहिनी।

मोहिनी : फिर आप मुझे नहीं जानते ! 'डाइवोर्स' होते ही मैं इनसे शादी करने जा रही हूँ।

कपूर : मेरी निगाहों में तुम अपने को गिराने की बेकार कोशिश मत करो। मैं जानता हूँ तुम्हें···

[मोहिनी टूटकर कुरसी पर बैठ जाती है और अपने उमड़ते आँसुओं को दबाने के लिए अपने-आपसे लड़ रही है।]

कपूर : तुम्हारी खुशी के लिए मैं आज ही सीता से कोर्ट में जाकर शादी कर लूँगा। (रुककर) तुम्हारे अनेक खत हैं मेरे पास--पिछले पाँच वर्षों में लिखे हुए। तुम्हारी इच्छा हो तो मैं उन सारे खतों को तुम्हें वापस दे दूँ।

[कपूर अन्दर जाता है। तेजी से खतों का ढेर लिए वापस लौटता है।]

कपूर : ये हैं तुम्हारे खत--मैंने इन्हें एक-एक कर सँजो रखा है।

महेन्द्र : लाइए दीजिए। इनका अब आप क्या करेंगे ?

[महेन्द्र बढ़कर खत लेना चाहता है। उसी क्षण मोहिनी जैसे सहसा जग जाती है।]

मोहिनी : (उठती हुई) महेन्द्र, तुम दूर हट जाओ उन खतों से। उन्हें छूने तक का भी तुम्हें अधिकार नहीं है (रुककर) तुम सीधे 'कार' में जाकर बैठो।

[महेन्द्र बिना कुछ बोले बाहर चला जाता है।]

मोहिनी : (सामने देखती हुई) ये खत किसी और मोहिनी के लिखे हुए हैं—मेरे नहीं। मेरे तो ये कागजात हैं।

[टेबल पर से अपने 'डाइवोर्स' के 'पेपर्स' उठा लेती है।]

मोहिनी : मैं तो यह हूँ।

कपूर : पर इसका कारण मैं हूँ, तुम नहीं। तुम तो एक अनुराग-लता थी, जिसकी मुझे रक्षा करनी चाहिए थी। दोषी मैं हूँ, क्योंकि मैं तुम्हें दिल्ली के चंगुल से नहीं बचा सका। मैंने अपने स्वार्थवश तुम्हें वहीं रहने दिया। ओह, इतनी स्वतन्त्रता ! मैंने ही तुम्हें गुमराह किया। मैं दोषी हूँ—मैंने तुम्हें पत्नी न समझकर केवल प्रेमिका समझा। मैंने तुम्हारा धर्म नहीं समझा—मैंने तुम्हें केवल 'रोमांस' समझा। (भरे कण्ठ से) सच, ईश्वर को तुम्हें इतना सुन्दर और मोहक नहीं बनना था।

[मोहिनी कुरसी पर गिरी-सी, मुख छिपाए रो रही है।]

कपूर : तुम बिलकुल निर्दोष हो मोहिनी।

मोहिनी : (सहसा उठकर) मैं अपने को यहाँ निर्दोष सिद्ध करने के लिए नहीं आयी थी।

कपूर : कैसे भी हो, इतने वर्षों बाद तुम एक बार फिर यहाँ आयी तो। तीन वर्षों के

बाद की इस भेंट के लिए ईश्वर को धन्यवाद !

[सड़क पर कार का तेज हार्न बजता है, फिर महेन्द्र के पुकारने की आवाज आती है।]

आवाज : मोहिनीजी, आइए !

मोहिनी : एक प्रार्थना है तुमसे ! (**सिसकते कण्ठ से**) यू प्लीज़ चार्ज मी।

कपूर : तुम बेगुनाह को ! ऐसा कभी नहीं हो सकता।

मोहिनी : तो मेरी सिर्फ यह आखिरी बात तुम नहीं मानोगे ?

कपूर : क्यों अब ऐसी बातें करती हो ? 'सैपेरेशन' के गत वर्षों में मैंने अनुभव किया है कि स्त्री क्या है ! तुम क्या हो ?

मोहिनी : मैं क्या हूँ, बोलो !

कपूर : मोहिनी···!

मोहिनी : फिर जो सच है, वह तुम्हारी ओर से मैं खुद कहूँगी। मैं अपने अहंकार के भँवर में अपने-आप से फँसी हुई उस मछली की तरह हूँ, जिसकी कोई गति नहीं। दिल्ली का वह अपना खूबसूरत बँगला, कॅन्वेण्ट की वह क्रैशनेबल सर्विस, वह मेरा बैंक बैलेंस ! और दिल्ली की इतनी सुन्दर जिन्दगी !···यह भँवर मैंने अपने अहंकार से बनाया। मैं···मैं···।

[बाहर से फिर लगातार कार का हॉर्न बजता है। उसी में मोहिनी की उमड़ती हुई सिसकियाँ डूब जाती हैं। महेन्द्र की पुकार आती है। मोहिनी कपूर के पास के पत्रों को अपने माथे से लगाती है, उन्हें जैसे अपनी आँखों में रख लेना चाहती है। फिर पत्र वहीं रख देती है और अपने 'पेपर्स' को लिए हुए बाहर जाने लगती है। बाहर जाते-जाते सहसा घूमकर।]

मोहिनी : बुलाओ, सीता को प्रणाम करूँगी। पुकारो···बुलाओ न उसे ! नहीं बुलाओगे ? मेरी अब कोई बात नहीं मानोगे ?

[कपूर मूर्तिवत् खड़ा है।]

मोहिनी : (**पुकारती है**) श्रीमती सीता दास !

[भीतर से सीता का प्रवेश।]

मोहिनी : नमस्ते।

[जैसे हाथ जुड़े ही रह जाते हैं। बाहर जाते-जाते सहसा मोहिनी झुककर सीता के चरण छू लेती है, और तेजी से बाहर निकल जाती है। सीता और कपूर दोनों उसी दिशा में देखते खड़े रह जाते हैं। पृष्ठभूमि में कार स्टार्ट होकर चली जाती है। कुछ ही क्षणों के बाद दूसरी ओर से गंगादासजी का प्रवेश।]

गंगादास : मोहिनी बेटी चली गई क्या ? लगता है, अभी-अभी गई है। (**रुककर**) कपूर बेटे, आओ मेरे पास आओ···सीता बेटी, तुम भी आओ।

[दोनों पिताजी के पास आते हैं।]

गंगादास : (**कपूर से**) बेटे इस तरह उदास क्यों ? त्यागने वाला कभी नहीं उदास होता। (**सीता से**) क्यों बेटी, फोटो खिचाने जा रही थी न ! मुझे भी अपने साथ 'फोटोग्रुप' में रख लो न ! बीच में नहीं, इस तरह 'पोज' बनाए किनारे खड़ा रहूँगा। और हाँ, फोटो घर में ही खिचेगी, हजरतगंज के 'स्टूडियो' में नहीं, हाँ !

[कपूर और सीता के मुख पर हँसी फैल जाती है। सीता झुककर गंगादासजी के चरण स्पर्श करती है। गंगादासजी उसे संग लिए हुए भीतर जाते हैं।]

[परदा]

गदर

पात्र

किसान
किसान की औरत
एक सिपाही
एक आदमी

[काल : अठारह सौ उनसठ ईसवी। जंगल में एक झोंपड़ी का दरवाजा। दिन का तीसरा पहर। बायीं ओर से किसान की औरत का प्रवेश। अवस्था पैंतालीस वर्ष के लगभग। आँचल में आम की गुठलियाँ लिए हुए है। जमीन पर गुठलियाँ रखती है। घर के भीतर जाकर सिल और लोढ़ा लाती है और चुपचाप गुठलियाँ फोड़ती हुई उनमें से गिरी निकालती है।

कुछ ही क्षणों बाद दायीं ओर से किसान का प्रवेश। अवस्था पचास वर्ष के लगभग। बढ़ी हुई दाढ़ी-मूँछ, फटे-गन्दे वस्त्र। एक हाथ में बन्दूक लटकाए हुए है, दूसरे में दो तलवारें। कन्धे से कारतूस-भरी चमड़े की पेटी लटकाए हुए है।]

किसान : तुम सच्चोसच कह रही थी दुबली कै माई, गदर मानो अब खतम होइ चुका। ···देखो न जंगल में आज ई बन्दूक पड़ी मिली। ई करतूस कै पेटी। अउ भला तलवार कै तो बातै न पूछो। जहाँ देखो वहीं तलवार···वहीं भाला-बल्लम किरिच-कटार ! सुनो हो दुबली कै माई,···गदर अब सचमुच खतम होइ गया। अरे छोड़ो ई आम कै सड़ी गुठली, उठो अब अपन मुलुक चलो।

[औरत निगाह उठाकर किसान की तरफ देखती है। किसान एक क्षण के लिए चुप हो जाता है।]

किसान : (**तलवारों को जमीन पर फेंकता है**) अरे ई तलवार तो हम तुम्हें दिखावे बदे लाए हैं।···सच, गदर खतम होइ गया हो दुबली कै माई ! मैदान से न जाने कितने सिपाही, कितने फरारी लोग यहि जंगल में आइ छिपे हैं·· सोचो तो भला, हाँ।

औरत : क्या सोचो-सोचो लगा रखे हो ? मैं अब कुछ नहीं सोचना चाहती।

किसान : अरे सुन तो भला ! ई बात है कि···

औरत : क्या सुनूँ ? सुनाओ न (**जैसे रक्त के आँसू घूंटती हुई**) आज ई जंगल में पशु-हैवान माफ़िक रहते हुए सवा साल तो गुजर गए। और रोज ही तो सुनाई पड़ता है कि मुआ गदर खतम होइ गया। आग लगे यही गदर मा। कभी सुनाई पड़ता है, नखलऊ का वह नवाब हार गया ! फिर सुनाई पड़ता है कि नहीं, फिरंगी हार गया। गोरा मारा गया। वह नवाब हार गया। वह नाना साहब भाग गया। और वो···।

किसान : अरे चुप हो जा दुबली कै माई, नहीं तो···।

औरत : नहीं तो क्या ? अब क्या बचा है जो किसी का डर रहे। (**रो पड़ती है**) आग लगे ई गदर मा।

किसान : अरे सुन तो सही। जरा धीरे-धीरे बोल। अब तो ऊ सारी बातें खतम ह्वै गयीं। सच, फिरंगी जीत गया रे दुर्बली कै माई। जीत गया फिरंगी। बदल गवा इतिहास···।

[औरत काम बन्द करके मूर्निवत, शून्य में अपनी नजर गड़ा लेती है।]

किसान : फिरंगी जीत गया। और वह जो नाना साहब था न! अरे वही नाना··· मराठा राजा···अरे वही जो फिरंगी लोग को भूनकर रख दिया था···अरे! तू ई सब नईं जानती क्या?

औरत : हूँ! अरे तुम्हीं ई सब जानकै बड़ा जग जीत लियो—नवाब···राजा··· महाराजा···हूँ। सुनते-सुनते कान पक गये। अब सिर्फ वही बाकी है कि ई जंगल मा पागल होकर चिल्लाऊँ।

किसान : अरे सुन तो सही भला। भागकर आए हुए सिपाही सब सच्चोसच बता रहे हैं, हाँ···वह नवाब तो पहले ही हार गया। फिर सारे राजा लोग भी हारे। और वह नाना साहब मैदान से भागकर यहि तराई के जंगल मा लापता होइ गया। सो गदर खतम होइ गया, हाँ। फरारी लोग भाग-भागकर जंगल मा आइ रहे हैं। और जंगल मा छिपी रैयत, रियाया अब अपने-अपने गाँव-मुलुक जाइ रहे हैं, हाँ भला। कलजुगी राज के बाद अब फिरगी राज रे दुर्बली कै माई!

औरत : (उठ खड़ी होती है) ई सब तुम्हें किसने बताया? बोल किसने बताया ई सब?

किसान : अरे वही फरारी लोग, जो मैदान से हार-हार कै यहि जंगल मा आइ रहे हैं।

औरत : और? और किसने बताया?

किसान : ई जंगल से जो लोग अपने-अपने गाँव-मुलुक वापस जाइ रहे हैं···।

औरत : हाँ-हाँ, वह सब सही है। मुला मेरा दुर्बली कहाँ है? बता मेरा दुक्खी कहाँ है? बता न। बता!···(**किसान के हाथ से बन्दूक छूट जाती है**) बोल, दुर्बली और दुक्खी के बारे मा किसी ने नहीं बताया न? तूने किसी से नहीं पूछा न? मुझे पता था···मुझे पता था कि यह गदर कभी नहीं खतम होगा। कभी नहीं··· कभी नहीं (**फफककर रो पड़ती है।**)

किसान : दुर्बली कै माई!···ओ दुक्खी कै माई धीरज धरो। अरे सुनो तो···सुनो··· माफी करो तो···!

औरत : राजा आए···पठान आए···मुगल औ नवाब आए···मराठा आए···अब अँगरेज आए···आगे फिर कोई और आएगा। और हमरे करम मा आग लगी रही। (**गला रुँध जाता है।**)

किसान : सुनो दुर्बली कै माई! ओ दुक्खी कै माई।

औरत : पहले मेरे दुर्बली और दुक्खी को मेरे सामने लाकर खड़ा कर, फिर मुझे उनकी माई कह, नहीं तो···।

[होंठ दाँत से भींच लेती है। झोंपड़ी में जाती है। लोटा में पानी लेकर उसे हथेली में लिए हुए चुपचाप बायीं ओर चली जाती है।]

किसान : (रोकता है) अरे ! अब कहाँ जाइ रही हो तुम ? अरे चुपचाप अपने गाँव-मुलुक लौट चलो कि··· (**जिधर वह औरत गई है, उसी ओर कुछ क्षणों अपलक देखकर**) पगलाय गई है बेचारी ! रोज इसी घड़ी, यही लोटा-पानी लेकर ई दुर्बली कै माई जंगल के किनारे खड़ी होकर पूतों के लौटने की राह देखती है। दुर्बली और दुक्खी···(**सोचता रह जाता है, फिर बन्दूक उठा लेता है**) पता नहीं ई किसकी बन्दूक थी। पता नहीं कितने-कितने लोग ई बन्दूक से मरे होंगे। अरे कहीं राजा-नवाब थोड़े ही मरते हैं। मरते तो हैं वही···

[उसी समय दायीं ओर से किसी के कराहने की आवाज आती है।]

किसान : कौन ? कौन है, अरे बोल न भाई ! हम ई बन्दूक-सन्दूक चलावै नाहीं न जानित।···अरे···

[एक आदमी का प्रवेश। जैसे हारा और टूटा हुआ। सिर के केश खुले हुए हैं। दाढ़ी बढ़ आई है। सारा व्यक्तित्व अस्तव्यस्त। शायद यह कोई सेनानायक या उससे भी बड़ा कोई पुरुष है। कमर से म्यान में तलवार लटक रही है। शरीर पर कई जगह घाव दिख रहे हैं। प्रवेश करके वह फटी-फटी आँखों से चारों ओर देखना चाहता है, पर तभी वह लड़खड़ाकर वहीं जमीन पर गिर पड़ता है और उसकी कराह से सारे वातावरण में जैसे एक लकीर खिंच जाती है।]

किसान : ई देखो दइवकै कोप। च···च···च···राम···राम···राम ! (**हाथ से बन्दूक जमीन पर छूट गई है। पास जाता है**) हे साहब !···सुनो भाई···कौन हो तुम ? राम···राम···राम ! बेहोश होइ गया बेचारा। कोई फरारी है ! (**झोंपड़ी में जाकर एक पात्र में पानी लाता है और उसके सिर को उठाकर उसे पानी पिलाता है**) और पानी ? और लाऊँ पानी ? (**कुछ क्षणों बाद वह आदमी उठ बैठता है। किसान झोंपड़ी से और पानी लाता है। आदमी वह सारा जल भी पी लेता है**) साहेब, आप कौन लोग हो ? फरारी हो, ई तो हम आपके देखते जान गए। मुला आप कौन फरारी हो ! राजा कि नवाब, कि वह नाना साहेब, कि···रजपूत कि मराठा कि···कि···? बताओ साहेब, बोलो न, ओह ! कुछ खाने को लाऊँ ? अच्छा···देखता हूँ। घबड़ाओ नहीं, हाँ। धीरज रखो···(**दौड़कर झोंपड़ी में जाता है। हाथ में दो रोटियाँ लेकर आता है**) ई लेव···खाइ लो। हम अपने आदमी लोग हैं···फिकर मत करो साहेब ! यहाँ कोई डर नाहीं।

एक आदमी ! छीः कैसी रोटी है !

किसान : हाँ-हाँ-हाँ···फेंको नहीं···फेंको नहीं। (**शेष रोटी ले लेता है**) आम की गुठली की रोटी है साहेब ! यही तो हमारे लिए अमृत है। और पानी लाऊँ ? बोलो न साहेब···डरो नहीं। अरे, इहाँ किस बात के फिकिर ?

एक आदमी : नहीं···तुम कौन हो ?

किसान : मैं ?

एक आदमी : यह बंदूक, तलवार···यह···? ये सब तुम्हारे हैं ?

किसान : नहीं, मेरा कुछ नहीं है साहेब । मैं तो एक किसान हूँ साहेब । ई रोटी मैं रख आऊँ साहेब, नहीं तो वह जो मेरी औरत है न···(भीतर रखकर आता है) नहीं तो साहेब वह जो दुर्बली कै माई है न, वह बस जुलुम मचा देगी जुलुम । (रुककर) तो साहेब, आप कौन लोग हो ?

एक आदमी : फरारी ।

किसान : ई तो साहेब मैं उसी दम जान गया था ।···तो गदर खतम होइ गया न साहेब ? (वह आदमी सिर हिलाकर हाँ कहता है) जीत किसकी हुई साहेब ? हाँ-हाँ साहेब, (रुककर) आप चाहे बताओ चाहे चुप रहो, मुझे सब पता है । अउर ऊ नवाब की फौज का क्या हुआ साहेब ?

एक आदमी : क्यों ? बोलो···बात क्या है ? डरो नहीं···बताओ···।

किसान : हमें कैसा डर साहेब, अरे जो डर की बात थी वह तो साहेब···(रुककर) बात ई है साहेब, कि हमारे दोनों लड़कों को नवाब के सिपाही पकड़कर उसी फरारी फौज मा···वही नवाब, जिसको जिन्दगी-भर हमने नहीं देखा, ना ही उसने ही हमें देखा । उसी की फौज मा जबरदस्ती हमार दोनों पूत···। (रुककर) हमरे लिए जैसे नवाब वैसे फिरंगी । (रुककर अपने-आपको सँभालता है) बड़के का नाम था दुर्बली । छोटे का नाम दुक्खी । (खामोश खड़ा रह जाता है) अब साहेब, इस दुर्बली कै माई को कौन समझावै । यहि जंगल के किनारे खड़ी रोज इनके लौटने की बाट जोहती है । उनके लिए दो रोटियाँ बनाकर रखती है । अउर अगले दिन भी जब उसके वे पूत नहीं आते, तब उन रोटियों को दूसरे दिन हम खाते हैं साहेब । (रुक जाता है) यहि माफिक आज ई जंगल मा हमें तेरह महीने होइ गए साहेब । बहराइच से उत्तर ओर अपना गाँव था न, मीरेपुर···। ढाई तीन सौ घर की आबादी थी साहेब ! खेत-खलिहान, घर-आबरू, हल-बैल, भैंस-गोरू···सब सत्यानास होइ गया साहेब ! हमें कभी किसी ने कुछ भी नहीं बताया । हाँ भला, जब सब जलने-लुटने लगा, अउर हम लोग यही तराई के जंगल मा आय छिपे, तब कहीं जाकर हमें सुनाई पड़ा कि साहेब, बहुत-से राजा हैं, ढेर सारे नवाब हैं···फौज के सरदार हैं, सिपाही हैं । (रुककर) हाँ साहेब, बिलकुल रामोराम । भला कोई ई विसवास करी ? नवाब का मनसबदार पाँच सिपाही लिए हमरे मीरेपुर गाँव पर चढ़ि आया । रामोराम साहेब, मिनट-भर माँ गाँव के सारे जवान आदमी पकड़ लिए गए और साही फर्मान पढ़कर सुनाइ दिया गया···कि चलो फिरंगी से लड़ने ···चलो तोप खींचने···बारूद ढोने ।

[उसी क्षण जंगल में बन्दूक दगने की आवाज होती है ।]

एक आदमी : (सावधान होकर उठ खड़ा होता है) यह फायर कहाँ हुआ ? मुझे दो यह बन्दूक, (लेकर) तुम बन्दूक चलाना नहीं जानते ?

किसान : मैं भला कैसे जानता । दुर्बली और दुक्खी भी नहीं जानते थे, साहेब !

एक आदमी : देखो, इस तरह बन्दूक में कारतूस लगाकर बस यों दाग दिया जाता है।

किसान : बस इतनी-सी बात (रुककर) अरे ई जंगल मा बन्दूक दगे के बारे मा आप न पूछो। जहाँ देखो वहँ पिट-पिट। कोई फरारी है तो कोई गद्दारी है, कोई फिरंगी है, तो कोई रियाया है··· (**हँस पड़ता है**) ओ हो हो···रामैराम साहेब, आज बहुत मुद्दत बाद हँसी आई है। इतनी-सी बात मुला हम कभी नहीं जान पाए। बड़ी ताकत है न ई बन्दूक मा साहेब ?

एक आदमी : अब तो जान गए न, यह लो अपनी बन्दूक, पकड़ो इस तरह से। और कसकर ! इस तरह देखकर निशाना लगाना।

किसान : बस दाग दूँ साहेब, बन्दूक ? बस···दाग दूँ ? जै भगवान् ! (**आसमान में फ़ायर कर देता है। इस बार और तेजी से हँसता है**) पता नहीं दुर्बली ई माफिक बन्दूक चलाई होगी या नहीं।

एक आदमी : मुझे कुछ नहीं पता। हम हार गए, सिर्फ मैं इतना ही जानता हूँ।

किसान : अउर जो बेकसूर मारे गए···लूटे गए, वो ? बोलो साहेब जिनसे कुछ भी मतलब नहीं रहा वे सब जो मारे-लूटे गए। बताओ साहेब···?

एक आदमी : बेकसूर तो सभी थे। सारी फरारी फौज, राजा-नवाब, मराठे सब कोई। सभी तो बेकसूर थे।

किसान : मुला ई हार क्यों हुई ? बताओ साहेब।

एक आदमी : पता नहीं।

किसान : पता क्यों नहीं ? तुम अपनी लड़ाई इस माफिक हार गए, अउर तुम्हें कारन नहीं पता ?

एक आदमी : लड़े तो हम। और कितना लड़ते ? मेरठ, झाँसी, कानपुर, कालपी, कल्यानपुर, इलाहाबाद, सतीचौराघाट, लखनऊ, फतेहपुर, बिठूर, रुहेलखण्ड और···

किसान : ···अउर आगे···। आगे···। बताओ न साहेब !

एक आदमी : आगे वही ईश्वर की मर्जी। अपनी-अपनी किस्मत ! जो बदा था वही हुआ। अरे, तुम मुझे इस तरह क्यों देख रहे हो ? बात क्या है ? मत देखो तुम मुझे इस तरह !

किसान : ईश्वर ? किस्मत ? तकदीर ? आप भी यही मानते हो ? अरे ई तो हम पंचन का सहारा था साहेब (रुककर) मैं बताऊँ साहेब, आप क्यों हार गए ? क्योंकि ई लड़ाई राजा औ राजा के बीच में थी।

एक आदमी : तो ?

किसान : तो क्या ? जो राजा मजबूत था वह जीत गया। फिरंगी को इस मुलुक पर नया राज करना था, अउर आप लोगन को अपन पुराना राज कायम रखना था। नया तो नया—ऊपर से वह फिरंगी। एक को नचाकर खेल खतम कर दिया साहेब ! अरे बबुआ, कौन लड़ा कौन जीता ! वही मसल है कि न कूकुर भूंका न पहरू जागा ! यह भी कोई लड़ाई रही साहेब !

एक आदमी : क्यों हम लोग नहीं लड़े क्या ?

किसान : अरे लड़े होंगे साहेब, आप लोग। हूँ ! राजा-महाराजा की लड़ाई। कहीं हमारी लड़ाई होती तो फिरंगी को छठी का दूध याद आता। मुला वो तो बातें अउर थीं।

एक आदमी : क्यों ? तुम्हारे दोनों लड़के भी तो लड़ने गए थे।

किसान : क्या कहा ? मेरे लड़के लड़ने गए थे ! वे लड़ने जाते तो मैं यहाँ जानवर के माफिक ई जंगल में आकर छिपता ? हम उस फिरंगी को दिखा देते कि हम क्या है। वह फिरंगी सरदार हेवलाक जो बड़ा जोधा बना घूमता है न, जिसने वह सारा अवध फुंकवाया, हम उस शैतान को उसकी पूरी फौज सहित घोंटकर पीस डालते। दुक्खी कै माई आम की ई गुठली पीसती है। (**रुक जाता है**) दुर्बली और दुक्खी लड़ने ही गए होते तो ई मूँछ ही आज क्यों गिरी होती। अरे, वे तो गुलाम के माफिक खींचकर ले जाए गए साहेब ! (**यह आदमी अपलक किसान को देख रहा है**) ठीक ही बात थी साहेब, इसमें क्या तकरार ! राजा हमें लड़ने लायक क्यों बनाता, वही मसल है कि फिर राजा क्या घास छीलता ? राजा की नजर मा तो सिर्फ राज था, हम कहाँ थे उसकी नजर में···

[सहसा जंगल में फिर बन्दूक दगने की आवाज होती है।]

एक आदमी : जंगल में बार-बार यह बन्दूक कौन दाग रहा है ?

किसान : वह हारे-भागे फरारी लोग होंगे साहेब। आप कौन हो, यह नहीं बताया। मुझ पर विश्वास नहीं है क्या ?···ठीक ही बात है, गरीब का कौन विश्वास !

एक आदमी : मैं अब यहाँ से जाऊँगा। लगता है, कोई यहाँ आ रहा है।

किसान : वही दुर्बली कै माई होगी साहेब, कोई डरने की बात नहीं ना, हाँ भला।

एक आदमी : नहीं, मैं इधर झाड़ी में चला जा रहा हूँ। किसी को मत बताना। हाँ खबरदार !

किसान : साहेब, मुझे मालूम ही क्या हुआ जो मैं किसी को बताऊँगा। (**आदमी का दायीं ओर प्रस्थान**) बड़ा डर गया है बेचारा ! क्यों न हो भाई, हार बड़ी बुरी बला है। (**रुककर बायीं ओर देखने लगता है**) कौन ? दुर्बली कै माई ! ओ दुर्बली कै माई ! (**औरत उदास मूर्तिवत् प्रविष्ट होती है। आकर हाथ के लोटे का पानी जमीन पर इस तरह गिराती है जैसे वह किसी को अर्घ्य दे रही हो। लोटा उसके हाथ से नीचे छूट जाता है**) दुर्बली कै माई ! लोटे का पानी इस तरह क्यों गिरा दिया ? ई असगुन है रे !

औरत : दुर्बली और दुक्खी बहुत प्यासे थे न।

किसान : प्यासे थे ?

औरत : हाँ। एक ओर से नवाब की फौज भागी। दूसरी ओर से राजा की फौज। सब भागे। मुला मेरा दुर्बली अउर दुक्खी तोप खींचते-खींचते वहीं बेहोश होकर गिर गए। वहीं—वहीं सो गए !

किसान : दुर्बली !···दुक्खी !

औरत : अब वे मेरे पूत नहीं आएँगे। दुर्बली मुझसे पूछ रहा था—माई, तुमने मेरा नाम दुर्बली क्यों रखा था ? बली नाम क्यों नहीं दिया था और वह दुक्खी—छोटका मुझसे कह रहा था—माई रे, ओ माई, तूने मुझे जनम क्यों दिया था ? क्या इसलिए कि···?

किसान : हे भगवान् !

औरत : हे ! तेरे भगवान् को लगे आग। बोल, बता मुझको, यह भगवान् किसका है ? जवाब दे मुझे···! (**किसान चुप है**) ई भगवान् उसी राजा, नवाब और उसी फिरंगी का तो है। उन्हीं मुँहजलों का···! ई भगवान् इसीलिए है कि हम अपने पूतों का नाम दुर्बली रखें—दुक्खी रखें।

किसान : तो तुझे विश्वास हो गया न कि गदर खतम हो गया ?

औरत : आह ! गदर कहाँ खतम हुआ ? कहाँ गदर खतम हुआ ?

[कहती हुई वह विक्षिप्त-सी झोंपड़ी के अन्दर चली जाती है। किसान अपनी जगह चुपचाप खड़ा है। क्षण-भर बाद वही औरत जैसे प्रतिहिंसा की आग में जलती हुई बाहर आती है। हाथ में वही आधी रोटी है।]

किसने खाई यह रोटी ? बोल किसने खाई यह रोटी ? किसने···?

किसान : एक आदमी···एक फरारी आया था···एक सिपाही···।

औरत : कहाँ है वह ? बोल कहाँ गया वह ?

किसान : क्यों ? क्या बात है रे दुर्बली कै माई ?

औरत : खबरदार जो मुझे दुर्बली की माई कहा ? खबरदार। मुहझौंसे ! तुझे पता है, यह आखिरी रोटी मेरे उन्हीं पूतों के लिए थी न। कहाँ है वह सिपाही ? कहाँ है वह फरारी ? (**बढ़कर जमीन पर गिरी तलवार उठा लेती है**) बोल कहाँ है वह ? मैं उसी से अपने पूतों के खून का बदला लूंगी।

किसान : मुला उस बेचारे का क्या कसूर रे ?

औरत : वह भागकर इस जंगल में क्यों आया ?

किसान : क्योंकि हार गया।

औरत : क्यों हारा वह ? मेरे पूत तो हारकर यहाँ नहीं आए। बता, कहाँ है वह ? कहाँ है बता ? नहीं तो मैं अपना कलेजा यही दम चीर डालूंगी।

किसान : बेचारा इसी झाड़ी में गया है रे। मुला सुन तो सही, दुर्बली कै माई ! अरे सुन तो। नहीं, नहीं, नहीं···। (**औरत तेजी से दायीं ओर बढ़ती है। किसान उसे पुकारता रह जाता है**) वाह रे दुर्बली कै माई। (**कारतूस भरी पेटी पहनता है। दाएँ कन्धे पर बन्दूक रखता है**) दुर्बली कै माई भी खूब है—पूछती है, वह क्यों हारा ?···(**पुकारता है**) ओरी दुर्बली कै माई ! चली आ···वापस चली आ। ऐसा कभी नहीं सोचना चाहिए रे। अउर फिर उस एक का क्या दोस। लड़ा तो था बेचारा···पर क्या करे। अरे वह हमें यह बताने आया था कि गदर खतम होइ

गया। अब हम ई जंगल से अपने-अपने गाँव-मुलुक जाएँ।

[औरत वापस आती है। तलवार उसके हाथ से नीचे गिर जाती है।]

औरत : वो तो सो गया है। उसके बदन में तो जगह-जगह घाव हैं। फिर भी वह सो रहा है। लगता है, वह सिपाही नहीं, कोई राजा है···कोई सेनापति है। और वह बेहोश सो रहा है। बड़ा अच्छा मौका है दुर्बली और दुक्खी की आत्मा को शान्ति मिलेगी, हाँ ! वे कितने प्यासे थे। कितने सवाल थे उनके ओंठों पर !

किसान : सच ?

औरत : हाँ, सच।

किसान : मुला एक बात तो सुन ? (**उसी क्षण बायीं ओर से एक सैनिक का प्रवेश**) कौन ?

औरत : कौन हो तुम ?

सिपाही : सिपाही।

किसान : कैसा सिपाही ?

सिपाही : सच-सच बताऊँ ? अब तक फरारी फौज का सिपाही। अब फिरंगी फौज का।

किसान : यहाँ क्यों आए ?

सिपाही : तुम सबको बताने कि गदर कभी का खत्म हो गया। अब चारों ओर अमन, सुख-शान्ति है। भागे हुए लोग अपने गाँव-देश जाकर उसी तरह अपना काम करें। अब अँगरेज बहादुर के राज में किसी तरह की गड़बड़ी नहीं।

औरत : उसी तरह ?

किसान : अँगरेज बहादुर का राज ?

सिपाही : अँगरेज बहादुर का सबसे बड़ा दुश्मन बागी सरदार नाना धूधूपन्त इसी तराई के जंगल में आ छिपा है। फिरंगी सेनापति हैवलॉक अपने सिपाहियों से इस जंगल को छनवा रहा है। जो आदमी उस नाना के पकड़वाने में, उसे जिन्दा या मुरदा कराने में मददगार होगा, उसे अँगरेज-हुकूमत बड़ा से बड़े इनाम देगी। रियासत-जागीर माफी···राजा बहादुर का दर्जा ! पदवी !

औरत : कैसा है यह नाना साहेब ? उसकी हुलिया क्या है ?

सिपाही : (**कागज निकालकर पढ़ता है**) नाम—नानाराव धूधूपन्त, दक्खिनी ब्राह्मण। उम्र—छत्तीस साल। रंग—गोरा। कद—पाँच फुट आठ इंच। ताकतवर बलिष्ठ। चेहरा—चपटा गोल। नाक—सीधी, सुडौल। बड़ी-बड़ी गोल आँखें। दाँत सब हैं अभी। छाती पर बाल। दायीं ओर घाव का निशान। सिर के केश काले। कानों में बाली पहनने के निशान।

[किसान का सिर झुक आया है। औरत एकटक सिपाही को लख रही है।]

औरत : और···? और कोई निशानी ?

सिपाही : पीठ और दायीं बाँह में ताजे घाव। सिर खुला हुआ। कमर में सिर्फ एक तलवार। जासूसों से पता चलता है कि वह कहीं इधर ही आया है।

औरत : मैं बताती हूँ···

किसान : दुर्बली के माई ! तू पागल तो नहीं हो गयी ?

औरत : हाँ, हाँ मुझे मालूम है—मैं बताऊँगी, ताकि मुझे वह इनाम मिले—राज ! रियासत ! नवाबी !

किसान : दुर्बली के माई।

औरत : चुप रहो तुम। चुप रहो।

किसान : आगे बोली तो तुम पर दुर्बली अउर दुक्खी के खून की कसम।

औरत : दुर्बली और दुक्खी के खून की कसम। मैं उन्हीं के तो खून का बदला चुका रही हूँ। बदला···खून का बदला खून।

किसान : मुला किससे ?

औरत : उसी से, जिसने हमारा पूत छीना। हमारा, घर-गाँव फुंकवाया। हमारे लिए जैसे राजा, वैसा ही नवाब, वैसे ही फिरंगी। हमें उस गदर से क्या सरोकार ?

किसान : दुर्बली के माई ! तुझे कुछ होस-हवास है कि नहीं ?

औरत : नहीं, नहीं, नहीं !···बोल किस राजा-बाबू-नवाब ने हमें होश में रहने दिया ? बता किसने हमें अपना समझा ? बोल ! हम गदर क्यों नहीं कर सके ? हमें कभी वह बन्दूक और तलवार क्यों नहीं दी गयी ? हमारे ही पूत का नाम दुर्बली और दुक्खी क्यों रखा गया ? बोल, किसने आज तक हमें आदमी समझा ? जो उलटे आज हम उनके लिए आदमी हों। बोल, जवाब दे मुझे !

[उसी क्षण दायीं ओर से—पृष्ठभूमि से—सहसा कराहने की आवाज आती है और वह आर्त्त स्वर—आह माँ ! माँ !···]

सिपाही : कौन ? कौन है वहाँ ? कौन है ?

औरत : वही है—वही है। पकड़ लो उसे !

किसान : नहीं ! नहीं ! नहीं !

[सिपाही दायीं ओर दौड़ता है।]

किसान : ई क्या किया तूने रे ? बोल ई क्या तूने !

औरत : वही किया जिसे करके एक छन में कोई राजा और कोई नवाब हो जाता है। अब तुम राजा बनोगे—मैं रानी कहलाऊँगी। फिरंगी के राजा। राजा और रानी। फिरंगी के राजा (हँसती है।)

किसान : चुप रह पगली ! वही राजा-रानी जिसने दुर्बली और दुक्खी को···?

[फिर वही आर्त्तस्वर—माँ ! आह माँ !]

औरत : वो किसे माँ कहकर पुकार रहा है ?

किसान : इसी माफिक दुर्बली और दुक्खी ने भी तो पुकारा होगा। इसी बोली में कराहा

होगा रे, सुन ले । सुन ले उसकी यह कराह !

[सिपाही तेजी से दौड़ता हुआ आता है। औरत दौड़कर उसका रास्ता रोक लेती है।]

औरत : रुको, कहाँ भागकर जा रहे हो ?

सिपाही : फिरंगी को खबर देने ।

किसान : कौन-सी खबर ?

सिपाही : कि कल तुम्हें इस तराई-इलाके का राज मिले ।

औरत : गद्दार ! गद्दार !

किसान : तो नाना साहेब को पहचान लिया ? वह रामोराम नाना साहेब थे ?

सिपाही : समय मत बरबाद करो । मुझे जाने दो, वरना वह कहीं गायब हो जाएगा तो ?

औरत : नहीं, तू नहीं जा सकता यहाँ से ।

[सिपाही रास्ता काटकर भागता है ।]

किसान : (**बन्दूक तान लेता है**) रुको ! कदम आगे बढ़ाया तो···

[सिपाही भाग चुकता है ।]

औरत : पकड़ो ! मारो ! मारो !

[किसान बायीं ओर दौड़ता है और बन्दूक से उसे दाग देता है। किसान लौटता है।]

किसान : एक ही गोली में मर गया रे ! राम-राम, बड़ा कमजोर था रे दुर्बली कै माई ! देखा न भला, कितना चालाक था बेचारा। अभी तक फरारी फौज में था, अउर अब हारकर फिरंगी फौज में जा मिला। हाँ, अपनी बन्दूक वहाँ छिपाकर, यहाँ खाली हाथ आया था। हाँ···

औरत : उसका नाम क्या रहा होगा ?

किसान : अरे वही रमगुलमा नाम रहा होगा रे ।

औरत : हाँ, बुद्धू नाम रहा होगा ।

[दोनों सूनी निगाह से एक-दूसरे को देखते हैं ।]

किसान : दुर्बली कै माई !

औरत : हाँ । अब···अब क्या होगा ?

किसान : यही कि अब हम अपने गाँव नहीं जाय सकेंगे। दुर्बली कै माई ! सुनो हमार बात। यहीं बैठिकै इन्तजार करो। शायद दुर्बली अउर दुक्खी आपन नाम बदल के यहाँ आवै—हाथन में बन्दूक लिए, आओ बैठो दुर्बली कै माई !

[दोनों चुपचाप वहीं बैठ जाते हैं। पीछे से उसी एक आदमी का प्रवेश। वह चुपचाप आकर उन्हीं दोनों के पास आ खड़ा होता है।]

किसान : जाव साहेब, अपने रास्ते जाव न ! आप यहाँ क्यों खड़े हो ? कहाँ आप राजा-बाबू, अउर कहाँ हम रियाया—हमार कौन साथ ?

औरत : हाँ साहेब, कहाँ आप कहाँ हम ?

किसान : आपका गदर तो खतम होइ गया। हमारा गदर तो मुला आज शुरू हुआ है। काश ई गदर हमका पहिले ही मालूम होइ गया होता।

औरत : अरे, हमारे गदर से इनका क्या सरोकार। जाओ साहेब, अपने रास्ते जाव।

किसान : हाँ साहेब, ठीके बात है।

एक आदमी : सुनो। यह देखो मेरी तलवार, देखो यह··· (**म्यान से तलवार निकालता है। तलवार टूटी हुई है**) यह अपनी टूटी हुई तलवार सँभाले इस जंगल में चला आया था कि कोई जाने नहीं कि मैं कहाँ गया। यह भी न कोई जाने कि मैंने इस तलवार को क्यों तोड़ा ? पर अच्छा ही हुआ कि बिना बताए ही तुम सब कुछ मेरा जान गए। मैं तुम्हारे प्रति इसलिए नहीं कृतज्ञ हूँ कि तुमने मुझे जीवन दिया। नहीं, बिलकुल नहीं। बल्कि इसलिए कृतज्ञ हूँ कि आज मुझे पहली बार लगा कि जीवन वह नहीं था जिसके लिए मैंने इतनी बड़ी लड़ाई की···वह तो स्वार्थ था—तभी मैं हारा···सभी हारे···सभी··· (**तलवार गिरा देता है।**)

किसान : छोड़ो इन बातों को साहेब, जाओ अपने रास्ते जाओ !

एक आदमी : क्यों ? मैं तुम्हारा पूत नहीं हो सकता क्या ?

[किसान और उसकी औरत उसे देखने लगते हैं।]

किसान : मेरा पूत तो वह भी हो सकता था साहेब, जिसको मैंने अभी···

[किसान की आँखों में जैसे रक्त के आँसू उमड़ आए हैं। आदमी एकटक उसे देख रहा है।]

[परदा]

वसन्त ऋतु का नाटक

पात्र

वह आदमी
युवक के पिता
युवती के पिता
युवक

[खुला मंच, एरेना थियेटर। मंच पर परदा खुलता है, तो वहाँ महज एक आदमी खड़ा हुआ दिखाई देता है। शेष मंच पर अन्धकार है। वह आदमी पैण्ट और कमीज पहने हुए है। हाथ में छड़ी है, आँखों पर चश्मा है। अवस्था उसकी लगभग पैंतालीस वर्ष की है।]

वह आदमी : (दर्शकों से) कुछ ही दिन हुए मैंने अचानक संयोग से एक वसन्त देखा था। वह, बस अजब ही था : इतना अजब कि आप सबके सामने वह बयान नहीं किया जा सकता। इसीलिए मजबूरन आज उसी वसन्त ऋतु का नाटक आपके सामने करना पड़ रहा है। मैंने उसे महज देखा था, तटस्थ रहकर केवल उसे अनुभूत किया था, मैं सिर्फ एक तीसरा आदमी था—इसीलिए मैं उसका पात्र नहीं था—न आज इस नाटक की भूमिका में ही हूँ। जब पात्रता नहीं, तो भूमिका कैसी ? मैं तो बस, आप ही सबकी तरह एक दर्शकमात्र था। तब भी और आज भी। खैर।...

आप सबको पता ही है, इलाहाबाद में एक मशहूर और मारूफ पार्क है—अल्फ्रेड पार्क। पार्क के बीचोबीच एक गोलाकार पुष्पोद्यान है अपने चारों ओर एक रक्षा-परिधि से खिंचा हुआ। उस परिधि में चारों दिशाओं से चार घुमावदार दरवाजे हैं—बाहर से भीतर जाने के लिए। उस परिधि के भीतर ही बैठने के लिए इधर-उधर अनेक बेंचें लगी हुई हैं। फिर सामने मौसमी पुष्पों की हरी-भरी सात त्रिकोनी क्यारियाँ हैं। अलग-अलग पुष्पों की—रंग-बिरंगी—जैसे इन्द्रधनुष। जहाँ क्यारियों के शिखर हैं—वहाँ उस पुष्पोद्यान का वह 'बैण्ड-सर्किल' है जिसमें दायीं-बायीं ओर संगमरमर की सिर्फ दो बेंचें हैं।

मार्च का महीना था—शुरू-शुरू के दिन। मौसमी फूल अब तक हँस रहे थे। लगता था, वसन्त ऋतु के हाथ में इन्द्र-धनुष खिंचा है। रात के नौ बज रहे थे। पार्क तब तक सूना हो चुका था। अकेला मैं ही उस बाहरी परिधि के भीतर वाले एक बेंच पर गुमसुम बैठा था। धीरे-धीरे फागुन का पछियाँव बह रहा था। मैं विचार-शून्य महज वहाँ बैठा ही था। सप्तमी का चाँद मेरे पीछे मौलश्री वृक्ष के ऊपर चुपचाप खड़ा था। तभी सहसा मैंने देखा, उत्तर दिशा से एक व्यक्ति और दक्षिण दिशा से दो लोग पार्क में से होते हुए उसी पुष्पोद्यान के भीतर आते हैं। और (**सहसा**) अरे ! क्षमा कीजिएगा, यह लीजिए, वे लोग तो जैसे खुद ही मंच पर आ रहे हैं। तो मैं फिर चुपचाप अपनी उसी बेंच पर बैठने जा रहा हूँ। देखिए, आप लोग बहुत ध्यान से सुनिएगा, हाँ ! ये लोग यहाँ एक बड़ी मजेदार बात करने आए हैं।

[उस आदमी का प्रस्थान —बायीं ओर। मंच पर प्रकाश फैल जाता है। दृश्य उभर आता है। मंच के बीचोबीच ऊँचाई पर उसी बैण्ड-सर्किल का दृश्य है। दायीं-बायीं ओर वही दोनों छोटे गेट। दायीं ओर से दो बुजुर्गवार प्रवेश करते हैं। दोनों की अवस्था यही पचास वर्ष है। युवक के पिता का सिर खुला है—धोती कुरता पहने है—ऊपर जवाहर बण्डी। युवती के पिता पैण्ट और बन्द गले के कोट में हैं, अर्थात् सूट में हैं। सिर पर सूट से मैच खाती टोपी है। बायीं ओर से युवक का प्रवेश। पैण्ट और बुशर्ट पहने हुए। अवस्था यही छब्बीस-सत्ताईस वर्ष। बुजुर्गवार दायीं ओर की बेंच पर बैठते हैं—युवक बायीं ओर की बेंच पर।]

युवती के पिता : तो बात शुरू की जाए ! क्यों शुकुलजी, ठीक है न !

युवक के पिता : बिलकुल ! इसीलिए तो हम लोग यहाँ आए हैं; हैं जी ! तो जज साहब, बात कहाँ से शुरू की जाए ? लीजिए, अब आप ही शुरू कीजिए; हैं जी !

युवती के पिता : अजी साहब, मैं क्या बात शुरू करूँ। आप ही शुरू कीजिए।

युवक के पिता : अजी साहब, आप शुरू कीजिए।

युवती के पिता : कैसी बात करते हैं जी भाई साहब ! और मैं क्या बात कर सकता हूँ। शुरू कीजिए !

युवक के पिता : नहीं, आप !

युवती के पिता : नहीं आप !

युवक के पिता : नहीं-नहीं, आप !

युवती के पिता : नहीं-नहीं, आप !

युवक के पिता : खैर, तो जज साहब, यह बात भी क्या चीज होती है अपने-आप में ! अहा-हा ! हैं जी ! ठीक कह रहा हूँ न !

[युवती के पिता चुप हैं।]

युवक के पिता : अब यही बात देखिए न, क्या बात पैदा हो गयी है यहाँ ! यह पार्क ! यह फुलवारी ! यह गजब की 'प्रायवेसी' ! हैं जी !···देखिए जज साहब, यह अँगरेज भी खूब थे। शहरों में पार्क की यह कल्पना उन्हीं अँगरेजों की ही है। ताकि हम परदों में रहने वाले इण्डियन्स यहाँ आकर अपने मसले हल किया करें ! हैं जी ! अब देखिए न जज साहब, यह संगमरमर की बेंच भी क्या चीज है। अहा-हा ! क्या बात है ! यही वह संगमरमर है जिस पर शाहजहाँ और मुमताज ने बैठकर कभी मुहब्बत की बातें की थीं। यही वह संगमरमर है—हैं जी, यही वह संगमरमर है जिस पर क्वीन विक्टोरिया ने बैठकर इंग्लैण्ड से हमारे हिन्दुस्तान पर हुकूमत की थी, हैं जी ! और यह वही संगमरमर है जहाँ हम बात कर रहे हैं ! ठीक है न ! अब आप बात शुरू कीजिए !

युवती के पिता : जी हाँ···जी हाँ ! देखिए आपको यहाँ आने में तकलीफ तो जरूर हुई होगी, लेकिन मैंने सोचा, यह जगह हर खयाल से बड़ी उम्दा रहेगी। हम धर्मेन्द्र बेटे से खुलकर साफ-साफ बातें कर सकेंगे, और यह भी हमें खुलकर जवाब दे सकेगा।

युवक के पिता : जी हाँ, बिलकुल ठीक। अब देखिए न, बात शुरू हो गयी न !

युवती के पिता : हाँ, तो बात शुरू कीजिए।

युवक के पिता : लीजिए, अब आप फिर रुक गए। बात शुरू रखिए न, बस बोलते रहिए : हैं जी। बस बात होती ही रहनी चाहिए। अब यही कि हम लोग यहाँ एक विवाह की बात करने आए हैं। ओहो, विवाह की बात भी क्या चीज होती है। अब शुरू कीजिए न; हैं जी !

युवक : (सहसा उठकर) पिताजी, अब मुझे यहाँ से जाने की आज्ञा दीजिएगा !

युवक के पिता : यह सँभालो, हैं जी ! अब असली बात पैदा हुई ! जज साहब, मेरे बेटे का समय बड़ा ही कीमती है !

युवती के पिता : अरे बैठो बेटा, बैठो-बैठो !

युवक के पिता : अच्छा-अच्छा, बैठ भी जाओ। हाँ जी, बात शुरू कीजिए।

युवती के पिता : समझ में नहीं आता, कैसे कहाँ से बात शुरू करूँ !

युवक के पिता : लीजिए मैं शुरू कर रहा हूँ—हाँ बेटा धर्मेन्द्र ! बात तुम्हारी शादी की है—मेरे दोस्त जज साहब की एकलौती बेटी बासन्ती के साथ। हैं जी ! अब आगे बढ़िए।

युवती के पिता : बेटा, मेरी बेटी बासन्ती को तुम पिछले कई सालों से जानते हो। वह तुम्हें चाहती है, तुम उसे चाहते हो, और अब हम लोग भी चाहते हैं कि तुम दोनों की शादी हो जाए।

धर्मेन्द्र : जी।

युवती के पिता : तो तुम्हें अब शादी मंजूर है न ?

[धर्मेन्द्र चुप है।]

युवक के पिता : अरे तुम बोलते क्यों नहीं बेटा ? जी···!

धर्मेन्द्र : क्या बोलूँ ?

युवक के पिता : अब सँभालो। हैं जी ! अब इन्हें भी बताना पड़ेगा कि यह हजरत क्या बोलें। अरे बोलो, बासन्ती से अब तुम शादी करोगे न ?

[धर्मेन्द्र चुप है।]

युवती के पिता : शुकुलजी, आप तो जानते ही हैं—यह केवल अब बासन्ती और धर्मेन्द्र की शादी का ही सवाल नहीं है, यह तो अब मेरी इज्जत का सवाल बन गया है। क्योंकि पिछले कई वर्षों से मेरे सारे सगे-सम्बन्धी, नाते-रिश्तेदार—सभी को पता हो गया है कि बासन्ती और धर्मेन्द्र की शादी होने जा रही है।

युवक : यह झूठ है ! बल्कि सबको यह पता है कि बासन्ती के पिता जज साहब—जिनका शुभ नाम श्री रामकुमार वाजपेयी है—वह अपनी बेटी की शादी धर्मेन्द्र से नहीं करेंगे।

युवती के पिता : अरे रे रे ! क्यों नहीं, क्यों नहीं ? मैं तुमसे अपनी बेटी की शादी क्यों

नहीं करूँगा ? आखिर क्यों ?

युवक : इसलिए कि हमारे समाज में यह ब्याह-शादी मनुष्य से, मनुष्य के रिश्ते से नहीं होती, हमारे यहाँ शादियाँ होती हैं नौकरी के रिश्ते से, पद और भौतिक खयालों से। ब्याह हमारे यहाँ महज एक कर्मकाण्ड है—एक परम्परा का पालन। यह जीवन-संगीत नहीं है।

युवती के पिता : भाई, समाज की तो बात मैं नहीं जानता, मैं सिर्फ अपनी बेटी को जानता हूँ। मुझे जब ये पता चला कि वह तुम्हें चाहती है, और तुम उसे चाहते हो, तो बस मैं भी यही चाहता हूँ, तुम दोनों का मंगल-ब्याह जरूर हो !

युवक के पिता : हैं जी ! ठीक किया आपने !

युवक : ठीक तो किया आपने ! पर बहुत विलम्ब से ! (**युवक भावनाओं में खड़ा हो जाता है**) काश, आपने यही निर्णय उस समय कर लिया होता ! जबकि मैंने स्वयं बासन्ती से ब्याह के लिए आपको अपना विनम्र निवेदन दिया था ! पर तब मैं सिर्फ एक साधारण व्यक्ति था—एक मनुष्य-मात्र—तभी आपकी निगाहों में मेरी जरा भी इज्जत नहीं थी। मैं अपदार्थ था तब। और आज जब मैं संयोग से डिप्टी कलक्टर हो गया तो सहसा एकदम से मैं मूल्यवान् हो गया। गोया मैं आदमी नहीं, शेयर-मार्केट का भाव हूँ !

युवक के पिता : हैं जी ! अब जवाब दीजिए वाजपेयी साहब ! बेटा, बैठ जाओ, तुम भावनाओं में आ गए हो न, हैं जी ! तुम इस तरह थक जाओगे बेटा ! हैं जी···!

युवती के पिता : सुनिए-सुनिए शुकुलजी, यह बात सच है कि तुम्हारी शादी के लिए जान-बूझकर मैंने मना कर दिया था, क्योंकि तब तुम मेरी नजर में नाबालिग थे।

युवक के पिता : हैं जी, नाबालिग। क्या कहा आपने ? नाबालिग !

युवक : लेकिन उसी वर्ष जिस लड़के को आपने अपनी बेटी की शादी के लिए बुलाया था—उसकी उमर मुझसे एक साल कम थी !

युवक के पिता : पर बेटा, वह देखने में तो तुमसे बड़ा लगता रहा होगा. हैं जी ! जज साहब, मैं सच कहता हूँ, कुछ लोग ऐसे होते हैं कि वे बुड्ढे हो जाते हैं, पर लगते हैं नाबालिग, और कुछ लोग नाबालिग रहते हैं पर लगते हैं बुड्ढे। हैं जी !

युवती के पिता : अजी शुकुलजी, आप तो मजाक करते हैं ! मैं जो कुछ कह रहा हूँ, सही कह रहा हूँ !

युवक : जी नहीं, आप सही नहीं कह रहे हैं ! आज आप सिर्फ वकालत कर रहे हैं। जिसमें भावना नहीं, केवल एक निर्मम स्वार्थ है।

युवक के पिता : अरे मेरी बात तो सुनो बेटा !

युवक : आपने तब मेरी पवित्र भावनाओं को अस्वीकार कर दिया, क्योंकि आप मुझे बिलकुल नहीं चाहते थे ! आप मुझे एक गैर-जिम्मेदार आवारा लड़का समझते थे। जब मैं एम० ए० में सेकेण्ड डिवीजन पास हुआ तो आपने तब मेरे लिए कहा था—यह सिर्फ क्लर्क बनेगा !

युवक के पिता : हैं जी ! जज साहब, सुन रहे हैं न !

युवक : और जब मैं रेलवे में इन्स्पेक्टर हुआ, तब आपने मेरे लिए कहा था—रेलवे के एक मामूली इन्स्पेक्टर से डिस्ट्रिक्ट जज की लड़की की शादी नहीं हो सकती।

युवती के पिता : सुनो तो भाई ! ओफ-ओ सुनो तो !

युवक : ठीक है, आप मुझसे अपनी बेटी की शादी न करते। लेकिन जब मैं छुट्टी पाकर कुछ समय के लिए आपके घर आता था—और आपके परिवार में बैठकर जब मैं बासन्ती से बातें करना चाहता था, तब आपको उतना भी क्यों असह्य होता था ? क्यों आप अपने कमरे में बेचारी बासन्ती की माँ को फटकारते हुए मुझे सुनाते थे कि 'यह धर्मेन्द्र क्यों यहाँ बैठकर सहगल के गाने गाता है ? मुझे यह कतई पसन्द नहीं···।'

युवती के पिता : सुनो-सुनो-सुनो। मेरी बात भी तो सुनो।

युवक के पिता : जरूर-जरूर ! हैं जी ! सुनो धर्मेन्द्र।

युवती के पिता : देखो, मेरा तुम्हारे घर से पुराना सम्बन्ध है। तुम्हारे पिता मेरे दोस्त और सहपाठी रहे हैं। तुम्हारे पिता जमींदार थे। मैं मुन्सिफ से धीरे-धीरे आज डिस्ट्रिक्ट जज हुआ। तुम्हें हमेशा मैंने अपने लड़के की तरह माना। तो तुम्हें क्या मुझे डाँटने और सही रास्ते पर देखने का तब हक नहीं था ? मैं गोया एक बात कह रहा हूँ।

युवक के पिता : हैं जी, क्यों नहीं ?

युवती के पिता : मुझे कभी भी लड़के-लड़कियों को इस तरह हा-हा-हा ठी-ठी करते देखने की आदत नहीं है। मैं डिसिप्लिन का सख्त कायल रहा हूँ।

युवक : झूठ है यह। सरासर झूठ।

युवती के पिता : ओहो धर्मेन्द्र ! तुम कैसी बातें कर रहे हो ?

युवक के पिता : देखो बेटा, जज साहब की मजबूरियाँ भी तो समझो तुम, हैं जी। जरा बेटा, ठीक से बातें करो तुम।

युवक : बताइए न, मैं इनसे किस तरह से बातें करूँ ? इनकी बेटी बासन्ती की तरह मैं अपने संग छल करूँ क्या ?

युवती के पिता : छल ? कैसा छल ? शुकुलजी, यह धर्मेन्द्र क्या कह रहा है आज ?

युवक के पिता : हैं जी ! कमाल है, मैं भी कुछ नहीं समझ पा रहा हूँ।

युवक : आप लोग सब कुछ समझते हैं—पर मुश्किल यह है कि आज उसे स्वीकार नहीं करना चाहते। आप सबको पता है—बासन्ती के सम्पर्क में मैं पिछले दश वर्षों से हूँ। मैं उसके समीप तब से हूँ जब मैं अपने पिताजी के संग बासन्ती की बड़ी बहन साधना की शादी में जज साहब के घर गया था—कानपुर में तभी मैंने बासन्ती को पहली बार देखा था। तब बासन्ती हाई स्कूल में पढ़ रही थी। हम दोनों अनायास एक संग खाते-पीते और बहन की शादी के कार्यों में हाथ बँटाते थे। बासन्ती ने मुझसे तब कहा था—यह धर्मेन्द्र नाम मुझसे नहीं लिया जाता। यह तो बड़ा 'सीरियस' नाम है। फिर उसने मेरा नाम रखा धम-धम पावस ऋतु। (**हँस पड़ता है**) धम-धम पावस ऋतु ! फिर मैंने भी उसका नाम रखा—बस बस बसन्त ऋतु।

युवक के पिता : ओहो ! वाह बेटा । शाबाश···।

युवक : तभी पहली बार उसके सामने बैठकर मैंने सहगल का वह पहला गीत गाया था—सुनो-सुनो हे कृष्ण काला···। फिर उसके दो वर्ष बाद मैंने बासन्ती को पहला पत्र लिखा था—जो दुर्भाग्य से आपके हाथ में पड़ गया था, और जिसे आपने बड़ी नफरत से फाड़कर कूड़े में डाल दिया था ।

युवती के पिता : ओहो, यह तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?

युवक के पिता : हैं जी ! जरा गौर कीजिए, हुई न एक बात । हैं जी !आगे बोल बेटा !

युवक : यह बासन्ती ने मुझे बताया था । और तब से मैं उसे कभी एक पत्र भी न भेज सका । पत्र लिखता था उसके लिए, पर उसे अपने पास ही रख लेता था ।

युवती के पिता : शुकुलजी, दरअसल बात यह है कि मुझे इस तरह की चिट्ठी-पत्रियों से सख्त नफरत है । यह क्या मजाक है पण्डितजी !

युवक के पिता : हैं जी ! यह तो अपने-अपने दिलो-दिमाग की बात है ! बुरा मत मानिएगा, हैं जी !···मैं कोई बुरी बात नहीं कर रहा हूँ ! हाँ···बेटा, 'कैरी ऑन' !

युवक : इसके बाद बासन्ती एफ्० ए० पास हुई और मैं उधर एम्० ए० पास हुआ । बासन्ती की शादी के लिए तब लड़के देखे जाने लगे । उसी वक्त मैंने आपकी बासन्ती से अपनी शादी के लिए प्रस्ताव दिया । और आपने उसे बेरहमी से ठुकरा दिया ।

युवती के पिता : भाई, मैंने वह सिर्फ 'डिसिप्लिन' के 'प्वाइण्ड ऑव रिव्यु' से किया था ।

युवक के पिता : हैं जी ! बिलकुल ठीक किया था आपने । हैं ! लौंडों की यह मजाल ! आखिर हम लोग इतने ऊँचे कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं कि कोई मजाक है ।

युवक : बासन्ती बी० ए० में पढ़ने लगी । उसे देखने के लिए बनारस से एक लड़का आया—एम० बी० बी० एस्० पास एक वर । उसने वासन्ती को देखा और वह बासन्ती को अस्वीकार करके चला गया । बासन्ती रोई, बहुत रोई पर आपने उसे डाँट-फटकार कर चुप कर दिया ।

युवती के पिता : जी हाँ, उसमें रोकने की क्या बात थी ! ऐसा तो होता ही है आजकल !

युवक के पिता : जी हाँ, देखिए यही जो हो रहा है ! हैं जी !

युवक : तब मैं रेलवे 'वेलफेयर इन्सपेक्टर' हो गया था, कानपुर में रहता था । और आप फतेहगढ़ में डिस्ट्रिक्ट जज थे । मैं हर इतवार को आपके यहाँ जाता था, पर मुझे बासन्ती से नहीं मिलने दिया जाता था । मैं सबके सामने उससे बात करता था, पर वह निरुत्तर मेरे सामने से हट जाती थी । मेरे खिलाफ जैसे आपकी कोई सख्त आज्ञा उस घर में चारों ओर खिंची रहती थी । मैं उसे मन-ही-मन अनुभव करता था; पर मैं अपने से लाचार न था । उन्हीं दिनों एक दूसरा लड़का नैनीताल से वासन्ती को देखने आया था । मेरे सामने ही वह बासन्ती को अपने संग लिए हुए इधर-उधर सुबह से शाम तक घूमता रहा । आप भी उस समय बँगले पर मौजूद

थे। पर उस दिन आपकी सारी कट्टरता न जाने कहाँ गायब थी। उस लड़के ने शादी में आपसे एक नई कार और दस हजार रुपयों की माँग की थी—और इस तरह से वह शादी भी नहीं तय हो पाई।

युवती के पिता : बात यह है शुकुलजी, वह लड़का मुझे पसन्द नहीं आया।

युवक : जी नहीं, उस लड़के को आपकी वह लड़की ही नहीं पसन्द आई। इसलिए वह सौदा महँगा ही था।

युवती के पिता : देखिए बाजपेयीजी, हैं जी ! मेरा लड़का कभी झूठ नहीं बोलता। वाह रे मेरा बेटा ! वाह ! हैं जी !

युवक : बासन्ती फिर रोई थी। वह भीतर से अपने कमरे को बन्द करके रोई थी। और बाहर आँगन में मैंने फिर बासन्ती से अपनी शादी के लिए आपसे निवेदन किया था। और आपने उसे भी ठुकराया था।

युवती के पिता : शुकुलजी, आपसे धर्म की कसम खाकर कहता हूँ—दरअसल उस समय मैं अपने-आपमें नहीं था। मेरा सारा दिमाग खराब कर दिया था नैनीताल के उस लौंडे ने !

युवक : आप जज थे—जिले-भर के न्यायाधीश। आपका इस तरह दिमाग खराब हो जाना आपके लिए ठीक ही था। सच, न्याय ऐसे में ही हुआ करता है !

[युवक के पिता ठठाकर हँसने लगते हैं। युवक अपनी जगह पर बैठ जाता है।]

युवक के पिता : (उठकर) भाई, माफ करना जज साहब, मुझे बेहद हँसी आ गई, हैं जी ! कैसे कहता है मेरा पूत ! वह भी किस अन्दाज से ! 'न्याय ऐसे में ही हुआ करता है !' वाह ! (हँसते हैं) ओहो, आनन्द आ गया। बुरा मत मानिएगा बाजपेयीजी, यह लीजिए, पान खाइए ! हैं जी !

युवती के पिता : खाइए आप !

युवक के पिता : अरे लीजिए तो ! बिना पान के कैसे चलेगा, हैं जी ! अरे लीजिए तो ! (देते हैं) लो बेटा, तुम भी खा लो, तुम्हारा गला तो बेहद सूख गया होगा, हैं जी ! वैसे बाजपेयी मेरा यह मुन्ना कभी पान तक नहीं खाता, इतना अच्छा बेटा ! अहा-हा ! न जाने कैसे तब इसके विषय में आपकी 'ओपीनियन' खराब हो गई थी कि यह ऐसा-वैसा लड़का है ! अरे खूबसूरत है, खुशमिजाज है, मेरा बेटा गाना-वाना भी गा लेता है, तो जाहिर है, लड़कियाँ शुरू से ही इसके आस-पास घूमेंगी ही। इसमें मेरे बेटे का क्या दोष ! जरा यह सोचने की बात है—हैं जी !

युवती के पिता : शुकुलजी, क्या बताऊँ, बस उस समय गलती हो ही गयी !

युवक के पिता : दरअसल मेरे बेटे का चेहरा ही ऐसा है, हैं जी ! होता है, कभी-कभी ऐसा, हैं जी !

युवती के पिता : शुकुलजी, एक गलती और भी हुई ! बैठिए तो बताऊँ—जोर से कहने लायक बात नहीं है।

[युवक के पिता बैठते हैं।]

युवती के पिता : मेरी बेटी ने दरअसल मुझे कभी इस बात का संकेत नहीं दिया कि वह धर्मेन्द्र को इतना चाहती है।

युवक के पिता : अजी, कुछ लड़कियाँ बड़ी चुप्पी होती हैं !

युवती के पिता : बासन्ती की माँ ने भी मुझे कुछ नहीं बताया !

युवक : किसी ने नहीं बताया, किसी ने कुछ संकेत नहीं किया—क्योंकि वह आप नहीं चाहते थे। क्योंकि आपको प्रसन्न रखना आपके घरवालों की पहली जिम्मेदारी थी।

युवती के पिता : धर्मेन्द्र, मेरी बात तो सुनो।

युवक : किसी में इतना व्यक्तित्व तो हो कि आपसे कोई अपने मन की बात कह सके।

युवक के पिता : (किंचित् गुस्से से खड़े होकर) क्या मतलब तुम्हारा ? यह व्यक्तित्व किसे कहते हैं ?

युवक : पर्सनॉल्टी को।

युवक के पिता : ह्वॉट इज़ पर्सनॉल्टी ?

युवक : यह एक चिड़िया होती है।

युवक के पिता : चिड़िया होती है ?

युवक : जी हाँ, एक चिड़िया।

युवक के पिता : क्या कहा ?

युवक : हैं जी, कुछ नहीं !

युवक के पिता : (सहसा बदलकर) ओहो ! अच्छा जी, अब मेरा लड़का मजाक के मूड में है। बाजपेयीजी, बस यही मौका है असली ! बस, झट से असली बात पर आप आ जाइए।

युवती के पिता : ठीक कहते हैं आप ! सुनो बेटा, भूल जाओ मेरी उन गलतियों को ! बस, मेरी बेटी बासन्ती से अपनी शादी अब मंजूर कर लो !

युवक के पिता : अरे भाई, जो कुछ देना हो, वह भी तो बता दो इसी समय !

युवती के पिता : दस हजार रुपये !

युवक के पिता : बस ! और वह नई कार ?

युवती के पिता : ठीक है—आखिर यह मेरी लड़की है—उस नई कार का भी इन्तजाम जरूर ही करना होगा !

युवती के पिता : अब हाँ कर दे बेटा ! मेरा मुन्ना···राजा बेटा !

युवक : (तेजी से खड़ा होकर) नहीं ! यह शादी मैं हर्गिज नहीं कर सकता !

युवक के पिता : क्या ?

युवक : अब यह शादी हर्गिज नहीं कर सकता !

युवती के पिता : क्या ?

युवक : मुझे यह शादी मंजूर नहीं ?

युवती के पिता : आखिर क्यों ?

युवक : मैं कोई सौदा नहीं हूँ जो इस तरह कहीं बेचा और खरीदा जाऊँ !

युवक के पिता : धर्मेन्द्र ! तुझे क्या होश-हवास नहीं ?